RNI No. 7127/60

डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City / 411 2020-22

संघशक्ति

मासिक समाचार पत्रिका

वर्ष : 59 अंक : 09 प्रकाशन तिथि : 25 अगस्त कुल पृष्ठ : 36 प्रेषण तिथि : 4 सितम्बर 2022

शुल्क एक प्रति : 15/- वार्षिक : 150/- रुपये पंचवर्षीय 700/- रुपये दस वर्षीय 1300/- रुपये

राई घटै नै तिल बदै, भिन-भिन लीधा जोय ।
चूंडा नै भीसम कहूँ, अति उक्ती नहं होय ॥

श्री क्षत्रिय युवक संघ के केंद्रीय कार्यकारी श्री कृष्ण सिंह राणीगांव का जिला शिक्षा अधिकारी प्रारंभिक मुख्यालय बाड़मेर पदस्थापन होने पर हार्दिक बधाई एवं उज्जवल भविष्य की मंगलकामनाएं

-: शुभेच्छु :-

चन्दन सिंह थोब, राण सिंह टापरा, पदम सिंह भाऊडा, परबत सिंह जाजवा,
मूल सिंह चांदेसरा, मूल सिंह जानकी, हरि सिंह थोब, बलवंत सिंह दांखा,
विशन सिंह चांदेसरा, आशु सिह जुंढ, सुरेंद्र सिंह भागवा, बालू सिंह खेड़ा
हरि सिंह रेवाड़ा जैतमाल, सवाई सिंह साथुनी, हीर सिंह कालेवा, हितेंद्र सिंह सिंधास्वा चौहान,
लाखसिह कांखी, उदय सिंह तिलवाड़ा, जय सिंह पारलू, किशनसिंह वरिया,
हरि सिंह मोखण्डी, जोगसिंह नोसर, उदयसिंह साजियाली, मांगु सिंह वरिया,
भीमकरण बागावास, सवाई सिंह टापरा, रूप सिंह परेऊ, प्रेम सिंह परेऊ,
खीम सिंह खेजड़ियाली, रिड़मल सिंह इंद्राणा, सुमेर सिंह कालेवा, वीर सिंह इंद्राणा,
भगवत सिंह चिरड़िया , प्रवीण सिंह सिणधरी, डूंगर सिंह चांदेसरा, राजू सिंह जाजवा,
उम्मेद सिंह पादरू, श्रवण सिंह साजियाली, भैरू सिंह डंडाली, करण सिंह दूधवा,
गोविंद सिंह पाँयला, धन सिंह पिण्डारण एवं समस्त कर्मचारी
श्री क्षत्रिय युवक संघ कर्मचारी प्रकोष्ठ बालोतरा संभाग

संघशक्ति

4 सितम्बर, 2022

वर्ष : 58 अंक : 09

-: सम्पादक :-

लक्ष्मणसिंह बेण्यांकाबास

शुल्क - एक प्रति : 15/- रुपये, वार्षिक : 150/- रुपये, पंचवर्षीय : 700/- रुपये, दस वर्षीय : 1300/- रुपये

विषय - सूची

☞ समाचार संक्षेप	✍	04
☞ चलता रहे मेरा संघ	✍ श्री भगवान सिंह रोलसाहबसर	05
☞ पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में)	✍ श्री चैनसिंह बैठवास	06
☞ मेरी राह	✍ उम्मेदसिंह बडोड़ागाँव	08
☞ मेवाड़ के भीष्म रावत चूंडा	✍ कमलसिंह बेमला	10
☞ छोड़ो चिन्ता-दुश्चिन्ता को	✍ स्वामी श्री जगदात्मानन्द	14
☞ पृथ्वीराज चौहान	✍ श्री विरेन्द्र सिंह मांडण	18
☞ यदुवंशी करौली का इतिहास	✍ राव शिवराजपाल सिंह इनायती	20
☞ राज की लाज	✍ धर्मेन्द्रसिंह आंबली	21
☞ महान क्रान्तिकारी राव गोपालसिंह खरवा	✍ श्री भँवरसिंह मांडासी	23
☞ षोड़श (सोलह की संख्या) की प्रतिष्ठा	✍ कर्नल हिम्मत सिंह पीह	25
☞ विचार सरिता (त्रिसप्तति लहरी)	✍ विचारक	28
☞ महर्षि पतञ्जलि योग सूत्र	✍ डॉ. मन्जु सिंह	30
☞ अपनी बात	✍	32

समाचार संक्षेप

पू. नारायणसिंह जी की जयन्ती :

श्री क्षत्रिय युवक संघ के तृतीय संघ प्रमुख पू. नारायणसिंह जी रेड़ा की जयन्ती 30 जुलाई को अनेक स्थानों पर मनाई गई। कुछ जगह बड़े समारोह रूप में मनाई गई और अन्य स्थानों पर शाखा स्तर पर जयन्ती सम्पन्न हुई। समारोहों में पू. नारायणसिंह जी की जीवन यात्रा का वर्णन प्रकट होता है तो स्वयंसेवकों को बड़ी प्रेरणा मिलती है। आध्यात्मिक क्षेत्र में ऊँचाइयों को छूने वाले नारायणसिंह जी से जब पूछा जाता कि आप में यह कुण्डलिनी जागरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई, उसके लिए आपने क्या किया, तो वे यही कहा करते थे कि मैंने कोई पूजा-पाठ, कोई अनुष्ठान नहीं किया। केवल पू. तनसिंहजी ने जो कहा वही किया। हमारे लिए तो उनका यह उत्तर स्पष्ट संकेत है कि जो संघ कहे उसे पूर्ण मनोयोग से, पूरी तत्परता से किया जाता रहे तो हमारे कदम भी उसी मंजिल की राह पर बढेंगे जिस पर पू. नारायणसिंह जी बढे। ऐसे समारोहों में पारिवारिक रूप से सम्मिलित होने पर विशेष लाभ होता है।

शिविर :

अगस्त माह के अंक में कुल 64 शिविरों की सूचना प्रकाशित हुई थी। कारणवश उसमें से 6 शिविर बदले हुए स्थान या बदली हुई तारीखों में सम्पन्न हुए। तीन शिविर ऐसे भी सम्पन्न हुए जिनकी सूचना प्रकाशित नहीं हुई थी और 8 शिविर अभी स्थगित कर दिए गये। कोविड की वजह से दो वर्ष तक यदा-कदा ही शिविर हो सके थे अत: स्वयंसेवक तरस रहे थे। अत: जब शिविर प्रारम्भ हुए हैं तो सभी जगह शिविरार्थियों की संख्या अनुमानित संख्या से बहुत अधिक हो रही है। प्रदेश के बाहर से भी अपने प्रदेश में शिविर लगाने के अनुरोध प्राप्त हो रहे हैं।

किसान सम्मेलन :

श्री क्षत्रिय युवक संघ के अनुषांगिक संगठन श्री प्रताप फाउण्डेशन की ओर से 24 जुलाई को जैसलमेर में किसान सम्मेलन का आयोजन किया गया। बाड़मेर जिले के किसान सम्मेलन के समाचार पाकर जैसलमेर के लोगों में भी जोश आया और पूरे जिले में प्रचार के लिए जुट गये। सभी के सहयोग से कार्यक्रम में उपस्थिति बहुत अच्छी रही। जिले के वर्तमान व पूर्व निर्वाचित जनप्रतिनिधि भी सम्मेलन में पहुँचे। नेता न बोलें, जनता के सामाजिक लोग बोलें और नेता लोग उनकी बात सरकार तक पहुँचाएँ, ऐसी व्यवस्था बाड़मेर की तरह जैसलमेर में भी की गई। कृषि कर्म में विभिन्न समाज जुड़े हुए हैं, उन सभी सामाजों के प्रमुख लोगों ने सम्मेलन को सम्बोधित किया और कृषि से जुड़ी समस्याएँ बताई। श्री क्षत्रिय युवक संघ के सरंक्षक माननीय भगवानसिंहजी के सान्निध्य में सम्मेलन सम्पन्न हुआ। सम्मेलन के समापन के पश्चात किसानों की ओर से अपनी माँगों का मांग पत्र जिलाधीश महोदय को सौंपा गया जिसमें सभी जन प्रतिनिधि और समाजों के प्रतिनिधि उपस्थित रहे।

अन्य कार्यक्रम :

देचू गाँव स्थित नागाणाराय कृषि फार्म पर संघप्रमुख श्री के सान्निध्य में स्नेह मिलन समारोह आयोजित हुआ। वीर दुर्गादास जी की जयन्ती शाखा स्तर पर अनेक स्थानों पर मनाई गई। एक आदर्श क्षत्रिय के रूप में दुर्गादास जी ने अपनी जीवनयात्रा पूर्ण की। उनका जीवन प्रेरणादायी है। शिविर संचालकों की एक दिवसीय कार्यशाला संघशक्ति प्रांगण में सम्पन्न हुई। गुजरात में मातृशक्ति उत्कर्ष सद्भाव सम्पर्क यात्राएँ आयोजित की गई और बताया गया कि नारी परिवार का केन्द्र है, उसी पर अपनी संतान को सद्संस्कार देने की सबसे बड़ी जिम्मेदारी है। माताएँ अपना यह दायित्व निभाएँ तो समाज जागृति में तेजी आ सकती है। जयपुर में पारिवारिक भ्रमण कार्यक्रम भी आयोजित हुआ। श्री क्षात्र-पुरुषार्थ फाउण्डेशन ने भी अपनी कार्य विस्तार बैठकें कई गाँवों में की। ❍

चलता रहे मेरा संघ

{उच्च प्रशिक्षण शिविर आलोक आश्रम बाड़मेर में 21 मई, 2022 को माननीय संरक्षक श्री भगवानसिंह जी रोलसाहबसर द्वारा प्रदत प्रभात संदेश}

भगवद्गीता में अध्याय 18 का श्लोक 14 है–

अधिष्ठानं तथा कर्ता करणं च पृथग्विधम्।
विविधाश्च पृथक्चेष्टा दैवं चैवात्र पञ्चमम्।।

अर्थात्– कर्म के होने में पाँच कारण बताए गए हैं। हम काम करें वह हो ही जाए आवश्यक नहीं है। उसके लिए क्या–क्या होना चाहिए? सबसे पहला है अधिष्ठान। कार्य करने का क्षेत्र होना चाहिए। क्षत्रिय युवक संघ के साधकों के लिए समाज ही अधिष्ठान है, क्षेत्र है। दूसरा है कर्त्ता। बहुत अच्छा क्षेत्र है लेकिन करने वाला नहीं हो तो भी कर्म घटित नहीं होता। तीसरा है करण। करण का मतलब होता है साधन। तो कर्त्ता हम हैं। साधन क्या है हमारे लिए? हमारा शरीर साधन है, हमारा मन साधन है, बुद्धि, चित्त, अहंकार... ये सब साधन हैं। उनके द्वारा ही कर्म घटित होता है। इसी को करण कहते हैं। फिर है विविध प्रकार की चेष्टाएँ। यह सब होते हुए भी हम प्रयत्न करें, प्रयत्न का नाम है चेष्टा। तो हम प्रयत्न करने के लिए यहाँ उत्सुक हैं इसलिए हम आए हैं। तो हमारा कर्म घटित होना चाहिए। पांचवा है दैव। दैव का मतलब ईश्वर अथवा हमारा प्रारब्ध। पूरी कौम का प्रारब्ध क्या है? पूर्व जन्मों में किए हुए कर्म... उनके फलस्वरूप इस वर्तमान युग में हम उसका किस प्रकार से उपयोग कर सकते हैं.. वो हमारे हाथ में नहीं है। जो पूर्व जन्मों के कर्म हैं वो अब हमारे हाथ में नहीं रहे और ना हमको पता है कि हमने कौन से कर्म किए थे, या नहीं। उनके फलस्वरूप जो प्रारब्ध बन करके इस जीवन में आया है वो यदि पक्ष में नहीं हो तो भी हम काम नहीं कर सकते।

क्षत्रिय युवक संघ में हमको यह शिक्षा मिलती है कि हमने अच्छे कर्म किए थे इसीलिए तो भारतवर्ष में जन्म लिया, इस कौम में जन्म लिया, इतना ही नहीं– श्री क्षत्रिय युवक संघ में आने का अवसर मिला। सभी कारण उपस्थित हैं। साधक कभी निराश ना हो इसलिए इनको जानना आवश्यक है। उतार–चढ़ाव जीवन में आएँगे, एक संगठन के रूप में भी और व्यक्तिश: भी। तो यह गीता का श्लोक हमको प्रेरणा देता रहे, इसको पूज्य तनसिंहजी ने बहुत महत्त्व दिया। इन्हीं बातों को समझाने के लिए गीता और समाज सेवा लिखी। संघ की संपूर्ण आईडियोलॉजी गीता पर ही आधारित है। तो गीता पढ़ने मात्र से कुछ नहीं होगा, जो 18वाँ अध्याय के श्लोक में बताया है वह सब चीजें हों और प्रयत्न करें तो साधक को किसी प्रकार की बाधा नहीं आएगी। हमको यह काम करना ही है यह तो हमने निश्चय कर लिया है। दिल से, मन से, हमने प्रतिज्ञाएँ कर ली हैं, स्वीकार कर लिया है कि हमको यहीं रहना है और कहीं नहीं जाना है। एक साधे सब सधे सब साधे सब जाए... तो हमारा जीवन सफल जीवन होगा। जीवन का उद्देश्य आपको बार–बार बताया जा चुका है–परमात्मा की उपलब्धि। परमात्मा कहाँ रहते हैं? परमात्मा हमारे हृदय में हैं। लगातार उनका स्मरण करते रहते हुए कर्त्ता यदि कर्म करता रहता है, साधक यदि कर्म करता रहता है तो निश्चित ही वह सफल होगा। यह आज के प्रभात का मंगल संदेश है श्री क्षत्रिय युवक संघ की ओर से।

गतांक से आगे

पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में)

''जो कुछ देखा, समझा व अनुभव किया''

– चैनसिंह बैठवास

श्री क्षत्रिय युवक संघ पूज्य श्री तनसिंहजी का परिवार है, कुटुम्ब है। एक बार माँ सा (पूज्य श्री की माता जी) ने पूज्य श्री से कहा– 'तुम घर के लिए जो रुपये देते हो, वह घर खर्च के लिए कम है, घर का काम कैसे चलाऊँ?'' इस पर पूज्य श्री ने माँ सा से कहा–''कितने रुपये चाहिए?'' माँ सा का जवाब–''जितने रुपये कमाते हो।'' पूज्य श्री ने कहा–''यदि सब इस परिवार को ही दे दूँ तो फिर मेरे परिवार का काम कैसे चलाऊँगा? मुझे उसे भी सम्भालना पड़ता है।'' माँ सा– ''तुम्हारा परिवार, कैसा परिवार? तुम्हारा कोई और भी परिवार है।'' पूज्य श्री–''हाँ, मेरा सांघिक परिवार है। इस परिवार के सम्बन्ध बने हैं– इस घर में जन्म लेने के कारण और उस परिवार में सम्बन्ध बने हैं–हमारे त्याग, तपस्या और साधन के आधार पर, इसलिए यह भी परिवार है और वह भी परिवार है।'' एक शिविर में घटी घटना इसी पारिवारिक भाव को दर्शाती है–

श्री क्षत्रिय युवक संघ का एक विशेष शिविर सितम्बर, 1962 में रतनगढ़ में होना था। इस शिविर के लिए पूज्य श्री तनसिंहजी दिल्ली से रेल द्वारा रतनगढ़ के लिए रवाना हुए। एक स्वयंसेवक तो दिल्ली से ही पूज्य श्री के साथ था, कुछ स्वयंसेवक बीच में उसी रेल में चढे। रात्रि में 9 बजे रेल रतनगढ़ स्टेशन पर पहुँची। रेल्वे स्टेशन पर शिविर आयोजक मिले और उन्होंने पूज्य श्री व स्वयंसेवकों को भोजन करने के लिए निकट के होटल में चलने को कहा, लेकिन पूज्य श्री तनसिंहजी होटल में जाने के बजाए शिविर स्थल की ओर रवाना हो गये, तो जो स्वयंसेवक रेल में उनके साथ आये थे, वे भी पूज्य श्री के पीछे–पीछे चल पड़े। स्टेशन से थोड़ी दूर आगे आने के बाद पूज्य श्री को पता चला कि वे स्वयंसेवक भी होटल में जाने के बजाए उनके पीछे–पीछे चले आ रहे हैं। पूज्य श्री रुके और अपने पीछे आने वाले स्वयंसेवकों को तो शिविर स्थल पर जाने का संकेत दिया और स्वयं पूज्य श्री रेलवे स्टेशन की ओर वापिस चल पड़े। पूज्य श्री के संकेत अनुसार स्वयंसेवक शिविर स्थल पर पहुँचकर अपने साथ लाये दरी–बिस्तर खोलकर आडे–टेढे हुए और पूज्य श्री तनसिंहजी का इन्तजार करने लगे। दिन भर की यात्रा की थकान के कारण उन्हें नींद आ गई। पूज्य श्री उनके लिए भोजन लेकर आए, तब तक वे सब सो चुके थे, इसलिए उन्हें जगाया नहीं गया। नींद आ जाने के कारण उन्हें ध्यान ही नहीं रहा कि पूज्य श्री कब आए। सुबह उठने पर पता चला कि पूज्य श्री तनसिंहजी उनके भोजन के लिए ही वापिस रेलवे स्टेशन गये थे। पूज्य श्री के इस स्नेह व आत्मीय भाव से गद्–गद् व कृतज्ञ हो गये। परस्पर प्रेम, स्नेह व आत्मीयता का भाव ही पारिवारिक भाव है, जो परिवार में सबको जोड़े रखता है। श्री क्षत्रिय युवक संघ में आने वाला हर स्वयंसेवक इस स्नेह व अपनत्व को संघ में महसूस करता है, इसका साक्षात अनुभव करता है।

सन् 1964 में श्री क्षत्रिय युवक संघ का उच्च प्रशिक्षण शिविर चित्तौड़गढ़ में होना था। पूज्य श्री तनसिंहजी उन दिनों सांसद थे और उनका प्रवास उन दिनों में दिल्ली में था। पूज्य श्री ने स्थानीय स्वयंसेवक को पत्र लिखकर स्थान की सूचना माँगी ताकि संघशक्ति में छपा कर सूचना प्रसारित की जा सके। पत्र का जवाब था कि स्थान तो काफी देखे लेकिन तय नहीं कर पा रहे हैं। पत्र मिलते ही पूज्य श्री रात की रेल से चित्तौड़गढ़ के लिए रवाना हो गये।

भूपाल राजपूत छात्रावास में पहुँचकर स्थानीय स्वयं–सेवकों से मिले। नित्य कर्मों से निवृत होकर उन्हें स्वयं–सेवकों के साथ स्थान देखने के लिए निकलना था इसलिए तीन साइकिलें किराये पर ली लेकिन पूज्य श्री ने एक साइकिल वापिस लौटा दी कि अनावश्यक किराया क्यों दिया जावे। पूज्य श्री एक स्वयंसेवक को अपनी साइकिल पर बिठाकर, दूसरे एक स्थानीय सहयोगी के साथ स्थान देखने के लिए रवाना हुए। उस स्वयंसेवक ने

साइकिल स्वयं चलाने का पूज्य श्री से आग्रह किया लेकिन पूज्य श्री ने यह कहकर मना कर दिया कि 'तुम मेरे से छोटे हो।' चित्तौड़गढ़ पहाड़ी इलाका है। पहाड़ी पगडंडियों पर साइकिल चलाते हुए दोपहर तक एक स्थान पर पहुँचे। स्थान देखा लेकिन छाया का अभाव था इसलिए स्थान पसन्द नहीं आया। अब आगे दूसरा स्थान देखने के लिए स्वयंसेवक को साइकिल पर बिठाकर स्थानीय सहयोगी के साथ चलते रहे। पहाड़ी पगडंडी पर चलते-चलते पसीने से लथपथ हो गये। दोपहर बाद किले के उत्तर दिशा में एक पेड़ के नीचे बैठकर सुस्ताने लगे। दूसरे स्थान के बारे में पूछा तो बताया कि किले के उस तरफ दूसरी दिशा में है। अब उस स्थान पर पहुँचने के लिए सामने चढाई थी। चढाई में साइकिल चलाना सम्भव नहीं था, तो साइकिल कँधे पर उठाकर चल पड़े। साथी स्वयंसेवक ने स्वयं लेने का आग्रह किया लेकिन मना कर दिया। जैसे-तैसे स्थान पर पहुँचे, स्थान देखा और फिर शहर के बीच से अपने साथी स्वयंसेवक को साइकिल पर बिठाकर साइकिल चलाते हुए भूपाल छात्रावास पहुँचे। रात की रेल से पुन: दिल्ली लौट गए।

पूज्य श्री तनसिंहजी जब भी जोधपुर आते तो मारवाड़ राजपूत सभा भवन पावटा में रुका करते थे। मारवाड़ राजपूत सभा भवन पावटा से चौपासनी स्कूल 11 किलोमीटर दूरी पर है, जहाँ पर श्री क्षत्रिय युवक संघ की शाखा लगा करती थी। वे जब भी जोधपुर आते तो शहर में रहने वाले स्वयंसेवकों के साथ साइकिल पर चौपासनी में लगने वाली शाखा में स्वयंसेवकों से मिलने जाया करते थे। पूज्य श्री एक स्वयंसेवक को अपनी साइकिल पर आगे डण्डे पर बिठाकर स्वयं साइकिल चलाते हुए जोधपुर शहर के बीचोंबीच पूरे शहर को चीरते हुए चौपासनी में शाखा स्थल पर पहुँचते थे। सांसद होने के नाते लोग उन्हें पहचानते थे इसलिए जब वे साइकिल पर निकलते तो अनेकों से उनकी मुलाकात होती रहती थी। एक सांसद को साइकिल चलाते देख लोग आश्चर्यचकित व हतप्रभ हो जाते थे कि इतने बड़े आदमी स्वयं साइकिल पर आ जा रहे हैं। सांसद और अहम् नहीं। उनका साइकिल पर आना-जाना यह दर्शाता है कि सांसद होने के बावजूद भी अहंकार उन्हें छू तक नहीं सका।

पूज्य श्री तनसिंहजी अपने व शिविर में आने वाले शिविरार्थियों के बीच में पारस्परिक दूरी व भय को दूर कर परस्पर मित्रत्व भाव व सच्चा प्रेम स्थापित करने में तत्पर रहते थे। इसका एक नजारा एक शिविर में देखने को मिला। एक प्रशिक्षण शिविर में भोजन के समय 4-5 छोटे-छोटे शिविरार्थी एक थाली में सामूहिक रूप से भोजन कर रहे थे। पूज्य श्री उनके साथ जाकर बैठ गये और छोटे-छोटे ग्रास तोड़कर उन्हें खिलाने लगे और साथ ही साथ स्वयं भी उनके साथ खाने लगे। बच्चे लोग खाना खाकर एक-एक करके उठने लगे। जब सब उठ गये तो पूज्य श्री ने थाली उठाई और साफ करके रख दी। जिनके साथ उन्होंने भोजन किया वे उस क्षण को कभी भूल नहीं सकते। वे उस क्षण को याद कर अपने आपको कितना सौभाग्यशाली व कृतज्ञ महसूस करते हैं।

पूज्य श्री तनसिंहजी ने अपने अनुयायियों को कभी अपना अनुचर नहीं माना, बल्कि अपना छोटा भाई व सखा ही माना। वे हर स्वयंसेवक को अपना छोटा भाई व सखा मानकर उन पर अपना स्नेह व वात्सल्य बरसाते रहते थे। पूज्य श्री चाहते थे कि- मेरे व स्वयंसेवकों के बीच पारस्परिक दूरी व भय है, वह दूर हो जाए और परस्पर सच्चा प्रेम स्थापित हो। क्योंकि अर्जुन और कृष्ण के जो अलौकिक सम्बन्ध थे, वैसे सम्बन्धों की आवश्यकता पूज्य श्री ने श्री क्षत्रिय युवक संघ में भी महसूस की और वैसे सम्बन्ध कृष्णार्जुन की भाँति सखा भाव का निर्माण करने पर ही सम्भव है, इसलिए पूज्य श्री तनसिंहजी ने संघ में सच्चे सखा भाव के निर्माण पर जोर दिया।

श्री क्षत्रिय युवक संघ पूज्य श्री तनसिंहजी का कुटुम्ब है। वे हर स्वयंसेवक को अपने इस कुटुम्ब का हिस्सा मानते थे। पूज्य श्री में जो अपनत्व व आत्मीयता का भाव था, यही भाव पारिवारिक भाव है और यही पारिवारिक भाव परिवार को जोड़े रखता है। उनके साथ में रहने वाले हर व्यक्ति ने इस पारिवारिक भाव को महसूस किया है। वे लोग भाग्यशाली हैं जिन्होंने उनके इस अपनत्व व आत्मीयता का साक्षात अनुभव किया। हम लोग भी भाग्यशाली हैं जो ऐसे महापुरुष के बताये मार्ग के राहगीर हैं, पथिक हैं।

(क्रमशः)

मेरी राह

– उम्मेदसिंह बडोड़ागाँव

सृष्टि के आदि से लेकर अब तक मेरे पूर्वज एक अनूठी राह के पथिक रहे हैं। उसी राह पर चलकर मेरे पूर्वजों ने अपने शाश्वत उद्देश्य की प्राप्ति की है। क्षात्रधर्म पालन की इस राह के कारण ही कहा है–

भूतानां प्राणिन: श्रेष्ठा: प्राणिनां बुद्धिजीविन:।
बुद्धि मत्सु नरा श्रेष्ठा,–नरेषु क्षत्रिया: स्मृता।।

– **मनुस्मृति**

इसी राह पर चलने हेतु जब–जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि हुई तो स्वयं भगवान भी राक्षसी प्रवृत्तियों का नाश करने इस क्षत्रिय कुल में अवतरित हुए हैं–

यदा–यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम।।

ईश्वर की कृपा से मुझे भी इसी क्षत्रिय कुल में जन्म मिला है अत: जिस राह पर चलने से क्षात्रधर्म का पालन होता हो, जो राह क्षात्रत्व के गुण–स्वभाव के अनुकूल हो, वही राह मेरे लिए अनुकरणीय, अनुसरणीय है।

शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम्।
दानमीश्वर भावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम्।।

वह राह, जिस पर चलने से उपरोक्त गुण मेरा स्वभाव बन जाए, वही मेरी एकमात्र राह है। जिस राह पर चलकर मुखड़ोजी गोहिल, पनराज जी, पाबूजी का सिर कटने के बाद भी उनका धड़ कोसों तक लड़ता रहा, जिसराह पर चलकर मेरे पूर्वजों ने जौहर व शाकों को अपनाया, वही शौर्य-पराक्रम वाली राह मेरे लिए अनुकरणीय है, अनुसरणीय है।

जिस राह के राहगीर राजा हरिश्चन्द्र ने स्वप्न में आए दान के विचार को सत्य मानकर अपना सर्वस्व दे दिया, दानवीर राजा कर्ण से जो भी माँगे, यहाँ तक कि स्वयं के जीवन रक्षक कवच तक का दान कर दिया और उसके दान करने के समय की पहचान भी राजा कर्ण की वेला से होने लगी। मेरे पूर्वजों का दान देने का भाव सदैव तेरा तुझ को अर्पण का रहा है, उस भाव की राह ही मेरे लिए अनुकरणीय है, अनुसरणीय है।

न्याय–नीति जो क्षात्रधर्म की धुरी है, वही न्याय–नीति शब्द राजा युधिष्ठिर, राजा विक्रमादित्य आदि का पर्याय बन गया। आज भी असहाय आमजन की आशा भरी नजरें क्षात्रधर्म की राह पर चलने वालों की ओर रहती है। वही न्याय–नीति वाली राह मेरे लिए अनुकरणीय है, अनुसरणीय है। उससे विपरीत चलने पर उपालम्भ भी केवल हमारे (क्षत्रिय–राजपूत) पर ही लगता है कि आपसे ऐसी उम्मीद नहीं थी।

सुशासन की बात करें तो वर्तमान प्रजातंत्र में भी सभी राजनैतिक दल रामराज्य लाने की बात करते हैं। जिन्होंने सुशासन की आदर्श व्यवस्था दी, वह राम भी मेरे ही पूर्वज थे। अत: मेरे लिए तो वही राह ही वांछित है। जिस राह पर चलकर राजा दलीप ने गौरक्षा हेतु स्वयं को शेर के सामने प्रस्तुत कर दिया था, राजा शिवि ने, हठी हमीर ने शरणागत की रक्षा की। वही शरणागत को आश्रय देने वाली राह तो मेरे लिए भी है, उसी का अनुकरण करूँ।

ध्रुव, प्रहलाद, मीरा, बाला सती जी ने जिस राह चलकर शाश्वत सनातन उद्देश्य की प्राप्ति की, वही ईश्वरीय भाव की राह मेरे लिए अनुकरणीय है।

जो राह कुमार गुप्त, राणा सांगा, कुम्भा, प्रताप, चन्द्रसेन, दुर्गादास, चाचकदेव, दूदा–तिलोकसी, लूणकरण ने अपनाई, जो राह जयमल, फत्ता, जैता, कूम्पा, झाला के जीवन की परम्परा बन गई, उसी परम्परा की राह मेरे लिए अनुकरणीय है।

महाभारत में अर्जुन के किंकर्तव्य विमूढ होने पर भगवान कृष्ण ने उसे चेताया और कहा–

कुतस्त्वा कश्मलमिदं विषमे समुपस्थितम्।
अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यमकीर्ति करमर्जुन।।
क्लैब्यं मा स्म गम: पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते।
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप।।

गीता 2–2, 3

यह असमय का मोह क्यों? श्रेष्ठ पुरुष ऐसा नहीं करते और न तो यह स्वर्ग को देने वाला है और न इससे

कीर्ति होती है। यह नपुंसकता उचित नहीं, इसे छोड़ और इस दुर्बलता का त्याग कर युद्ध कर।

श्रेयान्स्वधर्मो विगुण: पर धर्मात्स्वनुष्ठितात्।
स्वधर्मे निधनं श्रेय: पर धर्मो भयावह:।।

गीता 3-35

भली प्रकार आचरण किये हुए दूसरे के धर्म से अपना गुण रहित धर्म भी उत्तम है, अपने धर्म में मरना भी कल्याण कारक है और दूसरे का धर्म तो भय देने वाला है।

स्वभाजेन कौन्तेय निबद्ध: स्वेन कर्मणा।
कर्तुंनेच्छसि यनमोहात्करिष्यस्य व शोऽपी तत्।।

गीता 18-60

तू मोह के कारण आज युद्ध कर्म नहीं करना चाहता लेकिन उसे भी अपने पूर्वकृत स्वाभाविक कर्म से बंधा हुआ परवश होकर करेगा।

इस प्रकार भगवान ने एक सद्गुरु के रूप में अर्जुन को उसके स्वधर्म का बोध करवाया तब अर्जुन का मोह नष्ट हुआ और कहता है अब मैं आपकी आज्ञा का पालन करूँगा।

नष्टो मोह: स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत।
स्थितोऽस्मि गत सन्देह: करिष्ये वचन तव।।

गीता 18-73

महाभारत में जैसी किंकर्तव्य विमूढता की स्थिति अर्जुन की थी, वैसी ही स्थिति आज हमारे समाज की बनी हुई है। हम अपना स्वधर्म भूल चुके हैं। जिस उज्ज्वल परम्परा को हमारे पूर्वजों ने अपनाया, उसी परम्परा का अनुसरण तो करना है। पर, कौन भगवान कृष्ण की तरह आकर हमें सांसारिक माया से ऊपर उठकर स्वधर्म का पालन करने की राह बताए? आज की स्थिति की पीड़ा है तो खोज कहाँ करूँ? उस राह के राहगीरों को ढूंढू, पर कहाँ ढूंढू? किसी को गाते सुना-

धरती माता किसने रखी लाज मेरे सम्मान की।
अलबेलों ने लिखी खड़ग से गाथाएँ बलिदान की।

※

कहो चुकाई कीमत किसने उज्ज्वल इस इतिहास की
सुनो कहानी थर-थर करती धरती और आकाश की

※

किसे जिन्दगी देते हो तुम मरना यहाँ की शान है
आजादी के लिए जिन्होंने खाई रोटी घास की
यहाँ की स्वामिभक्ति का रे नहीं जगत में सानी है
क्षिप्रा में भी बोल रहा उन तलवारों का पानी है

※

आपस में माथों का सौदा कोई बांकुरा करता था
ऊँटाला कहता विस्मय से कैसा अजब जमाना था

पहचाना कि यह तो मेरे पूर्वजों की परम्परा के ही गीत गाये जा रहे हैं। इन गीतों की पंक्तियों ने तो मुझे उद्वेलित कर दिया। शान्त समुद्र में ज्वार जैसी प्रतिक्रिया हुई हो जैसे। प्रेरणा मिली, देखूं क्या मेरे पूर्वजों की परम्परा को पालन करने की झलक मिलेगी कहीं? तलाश प्रारम्भ हुई। सुना -

अपने तप की ले मशाल मैं ज्योति जगाता आया हूँ
हारे अर्जुन को कर्मयोग का पाठ पढाने आया हूँ

यही तो पीड़ा थी कि हमको इस किंकर्तव्यमूढता की स्थिति से कौन उबारेगा? पता चला पूज्य तनसिंहजी ने उसी मेरे पूर्वजों की राह के कटंक दूर कर उसे सुगम बनाने का यज्ञ प्रारम्भ किया, जो निरन्तर सक्रिय है। पूज्य श्री द्वारा स्थापित श्री क्षत्रिय युवक संघ हमारे मार्गदर्शक, हमारे सद्गुरु के रूप में भूले पथिकों का ध्रुव तारा बनकर पिछले पचहत्तर वर्षों से कर्मरत है। दैनिक शाखाओं, शिविरों, उत्सवों में खेलों, सहगीतों, चर्चाओं, बौद्धिकों के माध्यम से समाज में राह दिखाने का कार्य कर रहा है। मेरे शान्त जीवन को उद्वेलित कर प्रेरणा देने वाली यह राह ही तो में पूर्वजों की परम्पराओं के पालन की राह है। इसलिए मेरे लिए यही राह अनुकरणीय है, अनुसरणीय है। पूज्य श्री का आह्वान है -

साथ चलो तो आ जाओ, हम भी राही मंजिल के
ये किस्मत के दुर्दिन हैं, पार करेंगे मिल के
हो और के, सब छोड़ के, आ गले मिलें हम दौड़ के

अब तो मुझे भी यही कहना है -

राह मिल गई साथ हो गए और सुख का क्या करें?
बाँह ले ली हो किसी ने, चाँदनी का क्या करें?

सद्गुरु के रूप में श्री क्षत्रिय युवक संघ ने अपना लिया है तो अब और कुछ इच्छा ही नहीं रही, मैंने पा ली अपने पूर्वजों की राह।

मेवाड़ के भीष्म रावत चूंडा

– कमलसिंह बेमला

1395 ई. में मेवाड़ के महाराणा लाखा की महारानी लखमादे चौहान (खिंची) से एक पुत्र हुआ जिसका नाम चूण्डा रखा गया। चूण्डाजी बचपन से ही पिता का विशेष आदर करते थे और इसीलिए लोग उसे पितृ भक्त युवराज चूण्डा कहने लगे। एक दिन की बात है जब चूण्डाजी और उसके पिता महाराणा लाखा चित्तौड़ में किले की छत पर खड़े-खड़े बातें कर रहे थे तभी अचानक वहाँ से एक बारात निकली जिसे देखकर महाराणा ने चर्चा से भंग होते हुए एक ठंडी श्वास ली। जिसे देखते ही चूण्डा को लगा कि उसके पिता की विवाह की इच्छा अभी बाकी है तथा वह अभी भी संसार में आसक्त है। चूण्डा अपने पिता की हर इच्छा पूरी करना चाहता था, किन्तु इस विषय में लाज के कारण वह खुलकर नहीं कह सका।

कुछ दिनों बाद मेवाड़ में मारवाड़-मंडोर से चूण्डा जी के लिए राव रणमल जी अपनी बहन हँसा बाईजी कुँवर का रिश्ता लेकर दरबार में आये और नारियल नजर किया और कहा-''आपके कुँवर चूण्डा के लिए मेरी बहन का रिश्ता कुबूल करने की कृपा बक्षावें'' राव रणमल जी जो अपने पिता की नाराजगी के कारण मेवाड़ में रह रहे थे और दरबार में अपनी प्रतिष्ठा पाने के लिए अग्रसर थे, इसी बहाने से यह रिश्ता युवराज चूण्डा के लिए लाये थे। रणमल जी की यह बात सुनकर महाराणा ने दरबार में मजाक में कह दिया,- ''हाँ, भाई हमें पता है यह रिश्ता हमारे कुंवर के लिए ही होगा, हमारे लिए थोड़ी होगा, भाई हम तो अब बूढ़े हो चले हैं।'' जिस क्षण महाराणा ने यह वचन कहे देव योग से युवराज चूण्डा वहाँ आ गए और यह वचन सुनकर तुरन्त पिता की इच्छा भांपते हुए उन्होंने शादी से इन्कार कर दिया और वहाँ से आज्ञा लेकर चल दिए।

उसी रात चूण्डाजी ने रणमलजी को यह संदेश भिजवाया कि आपने अब तक हमें एक बार भी गोठ पर नहीं बुलाया, हम अब तक उस दिन का इन्तजार कर रहे हैं क्योंकि हमें आपसे कुछ जरूरी बातें करनी है। राव रणमल जो इस बात से हैरान थे, तुरन्त तैयारी में तत्पर हुए। भोजन के दौरान जब वार्ता चली तो चूण्डा जी ने अरज की कि राव रणमलजी अपनी बहन का रिश्ता उनके पिता से कर दे। इस पर रणमल जी ने इन्कार कर दिया। चूण्डाजी के बहुत समझाने पर भी जब रणमल जी नहीं माने तो चूण्डा जी ने पास खड़े रणमलजी के चांदन खिडिया चारण से कहा कि वह अपने सरदार को समझाए। रणमलजी ने महाराणा की वृद्धावस्था को इन्कार का कारण बताया जिसे चूण्डा जी ने तत्कालीन परम्पराओं का हवाला देते हुए नहीं माना। तब चतुर और चालाक चारण बोला कि राव साहब को हुजूर की उम्र से कोई तकलीफ नहीं है। किन्तु मेवाड़-राजपूताने के रिवाज के तहत महाराणा के बाद उनकी गद्दी का वारिस उनका बड़ा पुत्र होगा सो हमारा भाणेज एक साधारण ठाकुर बनकर रहेगा और छोटी सी जागीर पाकर अपना गुजर बसर करेगा जो राव साहब को पसन्द नहीं, इसलिए इंकार कर रहे हैं। यह उत्तर सुनकर चूण्डा ने तुरन्त भीष्म प्रतिज्ञा करते हुए यह प्रण लिया कि महाराणा के बाद उनकी गद्दी पर वारिस उनसे उत्पन्न पुत्र ही होगा और चूण्डा उसकी सेवा में हमेशा भाई अथवा रक्षक की तरह आजीवन तत्पर रहेगा।

इस पर रणमलजी मान गये और अगले ही दिन महाराणा का हंसा कुमारी से विवाह हो गया। तेरह महीने बाद महारानी हंसा बाई के एक पुत्र हुआ जिसका नाम मोकल रखा गया। जब महाराणा की मृत्यु हुई तब रानी हंसा बाई सती होने को तत्पर हुई, और चूण्डा से पूछा कि उसने मोकल के लिए कौनसी जागीर लिखी है? तब प्रत्युत्तर में चूण्डा ने कहा कि-''हे माता! आपका पुत्र मेवाड़ का महाराणा है और मैं उसका सेवक हूँ, साथ ही आपको सती नहीं होना चाहिए आप तो मेवाड़ बाईजीराज अथवा राजमाता हैं आपको तो इनका ध्यान रखना चाहिए अभी इनकी आयु

बहुत कम है। इस प्रकार चूण्डा ने महाराणा मोकल को मातृहीन होने से बचाया। इस कारण से चूण्डा की मेवाड़ में बड़ी प्रशंसा होने लगी क्योंकि कलियुग में ऐसा महान त्याग कौन राजपुत्र कर सकता था। चूण्डा ने न्याय पूर्ण शासन की स्थापना करी और प्रजा और मेवाड़ को मजबूत करने में पूरा ध्यान लगा दिया।

चूण्डा के बढ़ते प्रभाव से राठौड़ राव रणमल जी अपने को कमजोर समझ कर क्षुब्ध हो गये। अत: उसने हँसा बाई को चूण्डा के विरुद्ध भड़काते हुए कान भरने शुरू कर दिये और कहा कि चूण्डा ने मोकल को गद्दी पर बिठाकर अपना वचन तो पूर्ण कर दिया है पर वह मोकल को कभी भी गद्दी से निष्कासित कर खुद महाराणा बन सकता है इस बात का उसे संदेह है। नादान और अनुभवहीन महारानी हंसा बाई ने चूण्डा को बुलाकर कहा कि-''या तो तुम मेवाड़ छोड़कर चले जाओ या फिर हमें बतला दो कि हम कहाँ जाकर रहें।'' इस बात से चूण्डा को बड़ी ठेस लगी और चूण्डा ने तत्काल यह प्रण लिया कि वह मेवाड़ छोड़कर जा रहा है और तभी वापिस आयेगा जब महारानी हंसा बाई खुद चूण्डा को आने की आज्ञा देंगी। महाराणा मोकल की रक्षा और राज्य के प्रबंध के लिए चूण्डा ने केलवाड़ा से बुलाकर अपने छोटे भाई राघवदेव को सौंपी जो बड़ा बलवान और कुशल शासन कर्ता था।

चूण्डा मेवाड़ से निकल कर मांडू के सुल्तान होशंग शाह के पास जा रहे। मांडू मेवाड़ के करीब था, सो अवसर आने पर तुरन्त चित्तौड़ आना सरल रहे। मांडू पहुँचने पर सुल्तान होशंग शाह ने चूण्डा का बहुत आदर सत्कार किया और ''रावत'' की उपाधि से नवाजा। इसका कारण यह था कि चूण्डा ने गद्दी त्यागने के पश्चात् खुद को युवराज कहलवाना मना करवा दिया था सो सुल्तान उन्हें रावत चूण्डा कहता था। उधर चूण्डा के मेवाड़ से जाते ही रणमल जी ने धीरे-धीरे अपना प्रभाव मजबूत करना शुरू कर दिया। उसने मेवाड़ की सेना की सहायता से मंडोर के असली शासक सत्ता को मार दिया और स्वयं शासन करने लगा इधर मेवाड़ में भी उसने अपने रिश्तेदारी का हवाला देते हुए बड़े-बड़े पदों पर अपने राठौड़ सामंतों को बिठाने की पूरी कोशिश करी जिसमें राघवदेव की वजह से वह हर बार तो सफल नहीं हुआ किन्तु फिर भी उसने जबरदस्त प्रभाव बढा लिया।

एक दिन महाराणा लाखा के पिता महाराणा खेता के पासवानिये पुत्र चाचा और मेरा ने किसी बात से नाराज होकर महाराणा मोकल की हत्या कर दी। इस बात को उचित अवसर जानकर रणमल ने तुरन्त चित्तौड़ आकर चाचा और मेरा को मार कर महाराणा की हत्या का बदला बतलाकर अपना प्रभाव फिर से बढा लिया। अब रणमलजी मेवाड़ और मारवाड़ दोनों जगह अपना शासन करने लगे। उसकी राह में अब सबसे बड़ा कांटा केवल वीर राघवदेव जी थे जो नए महाराणा बालक कुम्भा की रक्षा और मेवाड़ में रह रहे राठौड़ सामंतों पर हर वक्त नजर रखते थे और चूण्डा को हर खबर देते रहते थे। राघवदेवजी ने हर तरफ चित्तौड़ के किले पर अपने विश्वस्त सिसोदिया सरदारों को लगा रखा था केवल बाहरी जागीरों पर उसकी पकड़ कमजोर थी क्योंकि जागीरें रणमल जी महारानी को बहलाकर अपने राठौड़ सिपाहियों को दे रहे थे। रणमलजी को राघवदेव जी से बड़ा भय था और उसको अकेले पकड़ना और काबू में करना मुश्किल था।

इसीलिए रणमल ने एक योजना रची और छल से राघवदेव को मारने की ठानी। उसने अपने दो विश्वस्त राजपूतों को एक सुन्दर और बहुत ही बेशकीमती कुर्ता जो कि बहुमूल्य रत्नों हीरे जवाहरातों से जड़ित था राघवदेव जी के पास उपहार स्वरूप भिजवाया जिसके पीछे छुपे कपट से भोलेभाले राघवदेव जी अनभिज्ञ थे। जब वे दोनों सरदार राघवदेवजी के पास पहुँचे तो पहले तो राघवदेव को कुछ संदेह हुआ, किन्तु फिर वह उनकी मीठी-मीठी बातों में आ गये की वह रणमलजी को अपना मित्र ही समझे वह सबका भला चाहते हैं। इस बात से राघवदेव जी आश्वस्त हुए और उनसे कहा कि रणमल जी से कहना कि मुझे उनका यह तोहफा बहुत पसंद आया और उन पर इसका उधार बाकी है जो वह भी कभी उतारेंगे ऐसी ही कोई वस्तु भेंट करके। यह कहते हुए राघवदेव ने उन्हें सीख का रुक्का दिया और सकुशल जाने को कहा। किन्तु

यह देख प्रत्युत्तर में उन राजपूतों ने कहा कि हुकुम ने फर्माया है कि यह कुर्ता आपको पहना हुआ देख कर ही वापस लौटना की उसका नाप सही है या नहीं। ऐसा कहने पर राघवदेव उनकी बातों में आ गये और अपनी तलवार और कटार दोनों कमर से निकाल कर एक ओर रखी और उस कुर्ते को पहना। जैसे ही उन्होंने कुर्ता पहना तो पाया कि उसकी दोनों बाहें आगे से सिली हुई थी, इतने में ही जैसे ही ऊपर देखा तो दोनों सैनिक अपनी तलवारें ताने खड़े थे और वीर राघवदेव जी पर वार पर वार कर उनकी निर्मम हत्या कर दी। इस बात से रणमल जी को बड़ी राहत पहुँची और उसने महारानी हंसा बाई को यह कहते हुए समझा दिया कि न जाने किसने उन्हें मारा होगा वह चिंता न करें वह खुद इसकी तहकीकात करेंगे। उन्होंने यह भी कहा कि राघवदेवजी तेज मिजाज के थे तो जरूर उनकी किसी से शत्रुता हो गयी होगी। जब चूण्डा जी को इस बात की खबर मिली तो वह बहुत क्रुद्ध हुये किन्तु अपने वचन के आगे लाचार थे। इस बात से दुखी होकर उसने इस घटना को एकलिंगनाथ पर ही छोड़ दिया और प्रार्थना करने लगे कि किसी भी तरह भोली राजमाता को अपने भाई के बुरे इरादों का पता चल जाए और वह पुन: मेवाड़ में प्रवेश कर रणमल जी से पुराने सारे घटनाक्रम का बदला लेवे।

इसी प्रार्थना से एक दिन नशे में चूर राव रणमलजी ने गलती से अपनी दासी भारमली को अपने गंतव्यों के बारे में कह सुनाया कि वह महाराणा को अपने रास्ते से हटाकर एक दिन खुद चित्तौड़ का महाराज बनेगा और उसको अपनी रानी बनाकर रखेगा। जब यह बात दासी ने सुनी तो वह शान्त रही और झूठी मुस्कान बताकर वहाँ से चल दी और तुरन्त महारानी हंसा बाई को सारा वृत्तान्त कह सुनाया। इन सब बातों से महारानी को बड़ा दु:ख और पश्चाताप हुआ और इस बात का डर सताने लगा कि यदि उसके भाई इन सब योजनाओं में सफल हो गए तो उसे अपने ससुराल के नाश का घोर पाप लगेगा जिसके लिए वह स्वयं को कभी माफ नहीं कर पायेगी, यह सब सोचते हुए महारानी हंसाबाई ने रावत चूण्डा को यह संदेशा भिजवा दिया कि तुम्हारे पिता का राज्य छूट रहा है, खबर मिलते ही पधारो और महाराणा की सेवा में रहकर राज्य करो और मेरे बर्ताव के लिए क्षमा करो। ऊँट सवार का यह संदेशा पाते ही चूण्डा जी ने अपने आने का नियत समय बतला दिया और लिखा कि जब तक वह नहीं आयें महाराणा को किसी गुप्त और सुरक्षित स्थान पर भिजवा दें। कुछ ही दिनों पश्चात् तुरन्त चूण्डा जी ससैन्य मेवाड़ में आ पहुँचे और बाकी सिसोदिया सरदारों और अजमलजी से जा मिले। अजमलजी जो कि सत्ता जी का पुत्र था और मंडोर का असली हकदार था। सत्ता जी को रणमल जी ने मेवाड़ी सेना की मदद से परास्त कर मार दिया था इस कारण अजमलजी उससे बदला लेना चाहते थे। चूंडा जी के अजमल से मिलने और सारे सिसोदिया सरदारों को इकट्ठा करने से रणमल जी को कुछ शक होने लगा जिससे उसने जोधा और अपने परिवार को चित्तौड़ के किले की तलहटी में सुरक्षित पहुँचा दिया और अपने पहरेदारों को सावधान कर दिया। एक दिन महाराणा के आदेश पर दासी भारमली ने रणमलजी को खूब शराब पिलाई और उन्हें खाट से बाँध दिया। फिर जब उसे कुछ होश न था तब बाहर सारे सिसोदियों ने झगड़ा शुरू कर दिया। चूण्डा जी और अजमलजी, जो कि मंडोर के असली वारिस थे एक साथ थे, ने मारकाट शुरू कर दी। इधर रणमल जी को खाट से बंधे हुए ही तीन हजुरियों ने जो कि भारमली के सहयोगी थे, उसी तरह धोखे से मार दिया जैसे रणमल जी ने राघवदेवजी को मरवाया था। कहते हैं रणमल जी भी आखिर वीर योद्धा थे ही, सो मरने से पहले पास रखे लोटे से दो आदमियों को मार कर खाट से उठ खड़े हुए थे। जैसे ही रणमलजी मारे गये तभी किले के किसी ढोली ने यह दोहा कहा –

चूण्डा अजमल आविया मांडू से धक् आग,
जोधा रणमल मारिया भाग सके तो भाग।

इस प्रकार मेवाड़ रणमल जी के जाल से आजाद हो चुका था चूण्डा जी ने चित्तौड़ आते ही सारा राज्य कार्य अपने हाथों में संभाल लिया और फिर मेवाड़ में शान्ति कायम की। चूण्डाजी ने मंडोर पर कब्जा कर लिया और साढे सात वर्ष तक मारवाड़ पर मेवाड़ का कब्जा रहा, जब महारानी हंसा बाई ने एक दिन महाराणा से अरज करी की

मेरे चित्तौड़ का और मंडोर का बहुत नुकसान हुआ है, लेकिन अब अगर सब तरफ शान्ति कायम हो जाये तो मुझे शान्ति होगी। सो आप चूण्डाजी से कहकर मंडोर से कब्जा हटवाओ तो मुझे खुशी होगी। महाराणा भी सबका भला चाहते थे सो चूण्डाजी को वापस आने का फरमान लिख भेजा। महाराणा का पत्र पाते ही चूण्डा जी मंडोर अपने तीन बेटों कुशल, मंजा और सुआ के हवाले छोड़ चित्तौड़ रवाना हुये और पीछे ही जोधा जी ने मंडोर पर हमला कर दिया जिसमें चूण्डा जी के तीनों पुत्र काम आए और मंडोर पर जोधाजी का कब्जा हो गया। जब चूण्डाजी चित्तौड़ आये तो महाराणा से मिलकर बड़े दुखी हुये, और जैसे ही मंडोर की खबर मिली तो और ज्यादा क्रोधित हुए और पुन: मंडोर पर कब्जा करने को तत्पर हुये। लेकिन इस बार महाराणा ने जोधा जी और चूण्डा जी के बीच बैराठगढ में संधि करवा दी और शान्ति स्थापित करी। जोधा जी ने अपनी सम्बन्धी पुत्री शृंगारदेवी का विवाह रायमल से करवाया जो महाराणा कुम्भा का पुत्र था। उधर जोधा जी भी पराक्रमी योद्धा हुये और बाद में जब मेवाड़-मारवाड़ संधि हुई, तो जोधपुर को अपनी नयी राजधानी कायम करी और नए राज्य की नींव रखी।

1427 में महाराणा कुम्भा का जन्म हुआ जो 1443 में गद्दी पर बिराजे जब महाराणा मोकल की हत्या चाचा और मेरा ने की। 1438 में जब राव रणमल जी मारे गये थे तब कुम्भा 11 वर्ष के हो चुके थे। ग्यारह वर्ष के राणा कुम्भा की नाबालिगी और चित्तौड़ में हुए ताजा उथल-पुथल के कारण गुजरात के सुल्तान अहमद शाह और मालवा के महमूद खिलजी दोनों सुल्तानों ने 1440 में चित्तौड़ पर हमला कर दिया जिसे मेवाड़ी फौज ने हरा दिया इस संयुक्त सेना को हराने की विजय-खुशी में विजय स्तम्भ का निर्माण 1442-1448 के बीच हुआ। विजय स्तम्भ जब बनना शुरू हुआ था तब कुम्भा 15 वर्ष के थे और निर्माण पूरा होने तक भी कुम्भा महज अधिक से अधिक 21 के हो चुके थे। तो यह कहना कि चूण्डा जी का इसमें कोई योगदान नहीं था बिल्कुल तर्कहीन ही साबित होगा। चूंकि चूण्डा जी उस मेवाड़ के प्रधान थे और उन्हीं के नेतृत्व में मेवाड़ में प्रशासन और राजपाट चलता था क्योंकि विजय स्तम्भ की शुरुआत के समय कुम्भा 15 वर्ष के थे सो निर्माण का विचार और उसे पूर्ण करने की जिम्मेदारी चूण्डाजी ने निभाई और महाराणा कुम्भा को समर्पित किया। चूण्डाजी अपनी स्वार्थ सिद्धि नहीं चाहते थे तभी संभवत: उन्होंने उसमें कहीं भी अपने नाम का उल्लेख नहीं करवाया। यही कारण था कि उन्हें त्यागवीर भीष्म की उपमा से नवाजा गया।

युद्ध वीर रावत चूण्डा ने मांडू के सुल्तान महमूद खिलजी द्वारा 1442, 1443 और 1446 तक लगातार और बार-बार हुए आक्रमणों से चित्तौड़ को न केवल बचाया बल्कि सुल्तान को बार-बार हराया भी। सुल्तान यह जानता था कि चित्तौड़ पर चूण्डा खुद कभी महाराणा नहीं बनेगा और वारिस महाराणा कुम्भा उम्र में छोटा है अगर चूण्डा और कुम्भा दोनों मारे जाएँ तो मेवाड़ पर कब्जा हो सकता है।

रावत चूण्डा जी ने गागरोन के खिंचियों को युद्ध में परास्त किया। 1443 में जब सुल्तान ने मेवाड़ में लूट और कब्जा जमाया तब उसने गागरोन पर कब्जा कर लिया था। गागरोन मेवाड़ और मालवा की सीमा के बीच में पड़ता था अत: खिंचियों ने सुल्तान के डर से मेवाड़ में मिलना मना कर दिया था इसी कारण चूण्डा को उन पर हमला करना पड़ा। चूण्डाजी ने टोडा के सगतसिंह सोलंकी को युद्ध में मारा।

दूसरी ओर 1438 में रणमल के मरने पर जब कुम्भा केवल 11 वर्ष के बालक थे तब उनकी संभाल के साथ ही साथ सात वर्ष तक मारवाड़ पर पूर्ण कब्जा रखा और 1438-1453 तक मंडोर पर अपना कब्जा रखा जब तक कि खुद महाराणा कुम्भा ने बड़े होकर एक दिन स्वयं मंडोर से सेना बुलाने का आदेश नहीं दिया। चूंडाजी के वंशज सलूम्बर, बेगू, देवगढ और आमेट ठिकाने में हैं और उदयपुर के प्रधान 16 उमरावों में इनका स्थान है, मेवाड़ के महाराणा का राजतिलक भी सलूम्बर के रावत सबसे पहले करते हैं। चूंडाजी के त्याग की उज्ज्वल पताका जब तक सूरज चाँद रहेंगे फहराती रहेगी।

❍

गतांक से आगे

छोड़ो चिन्ता-दुश्चिन्ता को

- स्वामी जगदात्मानन्द

कैसा अध:पतन :

भारत में शासन के दौरान अँग्रेज लोगों ने स्थानीय उद्योगों का विनाश करके भारत की प्रचुर धन-सम्पदा को लूटा। श्री ताराचन्द अपने 'स्वाधीनता आन्दोलन का इतिहास' में लिखते हैं, 'विलियम डिगबी का अनुमान है कि सम्भवत: पलासी के युद्ध (1757 ई.) से वाटरलू (1815 ई.) के बीच एक अरब डालर की राशि भारतीय खजानों से अंग्रेजी बैंकों में स्थानान्तरित हुई थी।' उन दिनों 45% लोग दोनों समय का भोजन नहीं पाते थे। स्वाधीनता आन्दोलन के नेताओं का लक्ष्य गरीबी उन्मूलन, जनता को शिक्षा प्रदान करना और राष्ट्र का सर्वांगीण विकास करना था। यद्यपि इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता है कि स्वाधीनता के बाद के वर्षों में राष्ट्रीय जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में असाधारण विकास हुआ है, परन्तु गरीबी रेखा के घटने का कोई संकेत नहीं है।

पाश्चात्य देशों में औद्योगिकी सम्पदा बढ़ने के साथ ही श्रमिकगण अपनी शिकायतों के निराकरण की जरूरत के प्रति सचेत हो गए। पर भारत में, देश की गरीबी घटने के पूर्व ही श्रमिकों ने हड़ताल आदि के द्वारा अपने अधिकारों के लिए लड़ाई छेड़ दी। हड़तालों और आन्दोलनों द्वारा उनकी माँगों की पूर्ति न होने पर वे सार्वजनिक सम्पत्ति को नष्ट करने पर तुल जाते हैं, जो सचमुच ही आत्मघाती है। यह आम बात हो गई है कि श्रमिक क्रोध के आवेश में अपने ही कारखाने के उन उपकरणों का नाश कर देते हैं, जिनसे उनका भरण-पोषण हुआ है और हो रहा है। ऐसे विध्वंसक कार्यों में छात्रगण भी सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं। किसी के भी द्वारा की गई कथित गलती के लिए करोड़ों रुपयों की सार्वजनिक सम्पत्ति को नष्ट करने की प्रवृत्ति बढ़ती ही जा रही है। अति मूल्यवान सार्वजनिक सम्पत्ति के ऐसे विनाश की खबरें समाचार-पत्रों में प्राय: प्रकाशित होती रहती हैं। बंगाल के विद्युत विभाग में एक बार राजनीतिक कारणों से अनेक अयोग्य लोगों की भरती हो गयी थी। इसके फलस्वरूप वहाँ अनुशासनहीनता और अक्षमता बढ़ती गयी। मशीनों की सही देखभाल न होने के कारण वे खराब हो गयीं, विद्युत उत्पादन गिर गया और विभिन्न कारखानों के उत्पादन में भी बड़ी तेजी से ह्रास आया, जिससे करोड़ों रुपयों का घाटा हुआ। राजनीतिक कारणों से लोगों को रोजगार देने की नीति इन दिनों आम बात हो गयी है। यह एक सर्वविदित तथ्य है कि रिश्वतखोरी और कालाबाजारी एक अपवाद की जगह नियम ही बन चुके हैं। यद्यपि सरकार कालाबाजारियों की संपत्ति को जब्त करने की नीति घोषित करती रहती है, परन्तु इस नीति के कार्यान्वयन हेतु कोई ठोस प्रयास नहीं किए जाते। क्या यह नैतिक ह्रास का एक लक्षण नहीं है कि इस राष्ट्रीय खतरे से निपटने के लिए ईमानदारी से कोई प्रयत्न नहीं किए जा रहे हैं? विशेषज्ञों का कहना है कि अगले 35 वर्षों में राष्ट्र की जनसंख्या दुगुनी हो जाएगी। देश में कितने लोगों को इस स्तर की शिक्षा प्राप्त है कि जनसंख्या वृद्धि के दबाव को समझ सके और फलस्वरूप होने वाले जीवन के भयानक संघर्ष की कल्पना कर सकें? गाँधीजी ने स्वतंत्रता मिलने के बाद देश में राम-राज्य के आगमन का सपना देखा था। उनका विश्वास था कि चरित्रवान और ईमानदार लोगों के संगठित प्रयासों का यह सुफल मिलेगा। परन्तु आज की राजनीतिक स्थिति राष्ट्र के बुनियादी स्तम्भों को ही नष्ट कर रही है।

यद्यपि नैतिक ह्रास भयावह स्तर तक पहुँच गया है, तो भी देश का कोई चिन्तक, धार्मिक नेता या राजनैतिक दिग्गज इससे चिन्तित नहीं लगता। ऐसा नहीं लगता कि उन्हें अपने चतुर्दिक हो रही घटनाओं की कोई परवाह है। विशेषज्ञों द्वारा आपस में संगठित होकर इस गम्भीर मसले पर विचार-विमर्श किए जाने की भी कोई सूचना नहीं है।

क्या हम यह आशा कर रहे हैं कि एक दिन यह सब स्वत: ही पूर्ववत् सुव्यवस्थित हो जाएगा?

ज्ञान का स्वर :

पिछली शताब्दी में ही स्वामी विवेकानन्द ने यह चेतावनी दी थी, 'सभी राजनीतिक तथा सामाजिक प्रणालियाँ और संगठन मूलत: मनुष्य की अच्छाई पर निर्भर करते हैं। संसद के कानून के द्वारा लोगों को सदाचारी नहीं बनाया जा सकता। इसकी कोई गारंटी नहीं है कि संसद द्वारा अच्छा कानून बना देने से कोई राष्ट्र अपने आप सबल हो जाएगा। परन्तु यदि देश के लोग अच्छे और महान हैं, तो वह देश स्वत: अच्छा और महान हो जाएगा। संसार की सभी प्रकार की सम्पदाओं में मनुष्य सर्वाधिक मूल्यवान है।

'सब बातों से यही प्रकट हो रहा है कि समाजवाद या जनता द्वारा शासन का कोई रूप, उसे चाहे जो नाम दिया जाए, उभरता आ रहा है। निश्चय ही लोग चाहेंगे कि उनकी भौतिक जरूरतों की पूर्ति हो, वे कम काम करें, उनका शोषण न हो, युद्ध न हो और भोजन अधिक मिले। इस बात का हमारे पास क्या प्रमाण है कि यह या कोई दूसरी समस्या, जब तक कि वह धर्म पर, मनुष्य के भीतर की अच्छाई पर निर्भर न हो, स्थायी होगी? विश्वास कीजिए, धर्म इस समस्या की जड़ तक पहुँचता है। यदि वह ठीक है, तो सब ठीक है।

'संसदीय अधिनियम, सरकार, राजनीतिक प्रशासन- ये सब वस्तुत: हमारे अन्तिम लक्ष्य नहीं, अपितु साधन हैं। इनके परे एक लक्ष्य है, जो इन तथ्यों में से किसी से भी शासित नहीं होता है। ईसामसीह को बोध हुआ कि नैतिकता और हृदय की पवित्रता शक्ति के सच्चे स्रोत हैं। हमारे ऋषियों ने भी इसी सत्य की घोषणा की। इस प्रकार यह सत्य है कि धर्म समस्या के मूल बिन्दु पर प्रहार करता है और यह मनुष्य का चरित्र-गठन करता है।

'धर्म की कोई गलती नहीं है। मेरा दावा है कि हिन्दू समाज की उन्नति के लिए धर्म का विनाश जरूरी नहीं है और समाज की यह दुरवस्था धर्म के कारण नहीं है, बल्कि धर्म को समाज पर जिस ढंग से लागू किया जाना चाहिए था, उस प्रकार लागू नहीं किया गया। मैं इस कथन का प्रत्येक शब्द अपने प्राचीन शास्त्रों के आधार पर सिद्ध करने को तैयार हूँ। इस दुरवस्था को मिटाया जाना चाहिए, परन्तु धर्म का नाश करके नहीं, अपितु हिन्दू धर्म की महान शिक्षाओं का अनुसरण करके ऐसा किया जाना चाहिए।

'अत: भारत में किसी भी प्रकार का सुधार लाने के पहले धर्म-प्रचार आवश्यक है। भारत को समाजवादी या राजनीतिक विचारों से प्लावित करने के पहले आवश्यक है है कि इसमें आध्यात्मिक विचारों की बाढ़ ला दी जाए। सर्वप्रथम, हमारे उपनिषदों, पुराणों और अन्य सब शास्त्रों में जो अपूर्व सत्य छिपे हुए हैं, उन्हें इन सब ग्रन्थों के पन्नों से बाहर निकालकर, मठों की चारदीवारियाँ भेदकर, वनों की शून्यता से दूर लाकर, कुछ सम्प्रदाय-विशेषों के हाथों से छीनकर देश में सर्वत्र बिखेर देना होगा।

'देश में राष्ट्रीय भावना जगाने का उपाय यही है कि अपनी लुप्त हो रही आध्यात्मिक शक्ति को पुनर्जीवित किया जाए। यदि हमें अपना अभ्युत्थान करना है, तो हमें आपस में झगड़ना बन्द कर देना चाहिए। अपने सम्मुख यह आदर्श रखो- ''धर्म को बिना हानि पहुँचाए जनता की उन्नति।''

कुल मिलाकर, जनता में आध्यात्मिक जागृति उत्पन्न करना मानो राष्ट्र के खून को स्वच्छ करना है और पौधों पर उचित प्रकार के कीटनाशक छिड़कना है। शिक्षित तथा ज्ञानी लोगों को प्रयासपूर्वक आध्यात्मिक विचारों को आत्मसात् करके लोगों में धर्म का संदेश फैलाना चाहिए। चाहे कोई भी दल विजय प्राप्त करे, परन्तु मनुष्य का हृदय पवित्र न होने पर स्वार्थपरता ही हमारे राष्ट्र-शरीर को प्रभावित करेगी। एक पवित्र-हृदय व्यक्ति की भला कौन बराबरी कर सकता है? इमारत मजबूत तभी होती है, जब उसकी प्रत्येक ईंट मजबूत और अपने सही स्थान पर दृढ़ हो। जलधारा बनाने में जल की प्रत्येक बूँद का योगदान होता है। अन्न-भण्डार को भरने में हर दाने का योगदान होता है। व्यक्तिगत चरित्र-सुधार द्वारा ही हम सामाजिक

कल्याण की आशा कर सकते हैं। चरित्र-विकास की बुनियाद ईश्वर और स्वयं में विश्वास तथा अन्ततः भलाई के विजयी होने के विश्वास में निहित है।

विश्वास की स्थापना :

ऐसे कोई आसार नहीं दिखते कि हमारे देश के शिक्षित लोग आध्यात्मिकता, धर्म और ईश्वर जैसी धारणाओं में कभी रुचि लेंगे। विडम्बना यह है कि धर्म के दुर्बल अनुयायी ही धर्म की नींव को दुर्बल बनाते हैं। आज अध्यात्म की नींव अधिकाधिक दुर्बल होती जा रही है। धर्म की सही सोच रखने वाले लोगों का यह दृढ़ विचार है कि आध्यात्मिकता का अभाव ही आज के विश्व के समस्त नैतिक ह्रास के लिए सीधे जिम्मेदार है। आध्यात्मिक नींव के दुर्बल होने का क्या अर्थ है? इसका अर्थ यह नहीं कि धर्म के सिद्धान्त अपनी उपयोगिता खो चुके हैं। लोग अपने दोषों के कारण उन सिद्धान्तों के पालन में शिथिल होकर उनमें श्रद्धा खो चुके हैं। पर वे सिद्धान्त आज भी हितकर हैं। न्यूटन की खोज के पहले भी गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त मौजूद था। हमारे द्वारा विस्मृत तथा न दिखने वाली चीजों का भी अस्तित्व है।

परन्तु प्रकृति के नियमों को जान लेने पर हम अपने सुख और हित में वृद्धि हेतु उसकी शक्तियों को नियंत्रित कर सकते हैं। धर्म के नियम सनातन सत्यों पर आधारित हैं। कोई समाज विभिन्न कारणों से धर्म में अविश्वासी हो सकता है। क्षणिक और प्रलोभनकारी चीजों से विमोहित होकर लोग धर्म के सिद्धान्तों से विमुख हो सकते हैं। यह धार्मिक ह्रास का प्रारम्भ है। यदि हम धर्म का अनुसरण नहीं करते, तो इसमें धार्मिक सिद्धान्त गलत सिद्ध नहीं हो जाते। इससे घाटा मनुष्य का ही होता है। यदि हम स्वास्थ्य एवं स्वच्छता के नियमों का पालन नहीं करते, तो इससे कष्ट किसे मिलेगा? नियम भंग करने वाले को ही कष्ट मिलता है। 'इस धर्म का रहस्य, अतीत काल में मैंने सूर्यदेव को बताया था। सूर्य ने इसे मनु को दिया। मनु ने यह रहस्य इक्ष्वाकु को बताया। अतीत काल के आध्यात्मिक प्रवृत्ति वाले सम्राट इस परम्परा को जानते थे। परन्तु हे अर्जुन! काल के प्रवाह में परम्परा के खण्डित हो जाने से यह ज्ञान लुप्त हो गया।' दूसरे शब्दों में, इन्द्रिय-संयम से रहित दुर्बल लोगों के हाथों में चले जाने पर, यह ज्ञान लुप्त हो गया। वस्तुतः यह ज्ञान लुप्त नहीं हुआ, बल्कि इस योग के तथाकथित जानकर लोगों ने अपने स्वार्थ-साधन हेतु प्रयोग करके इसे बदनाम और इसका पतन किया। लोग स्वभावतः इसमें अपना विश्वास खो बैठे। अब धर्म के पुनरुत्थान का अर्थ है, ऐसी श्रद्धा का पुनरुत्थान जिससे लोग धार्मिक नियमों के अनुसरण में दृढ़तापूर्वक तत्पर हों। सन्त, महापुरुष और ईश्वर के अवतार पृथ्वी के लोगों के मन में यह विश्वास स्थापित करने हेतु प्रयत्नशील हैं। हमारे देश में सारे सामाजिक और राजनीतिक विकास के पीछे आध्यात्मिक व्यक्तियों का अमोघ मार्गदर्शन विद्यमान है।

परन्तु शिक्षित होने का दावा करने वाले और उच्च पदों पर बैठे तथा सामर्थ्यवान लोगों ने दुर्भाग्यवश हमारे देश की इस गौरवमयी आध्यात्मिक परम्परा को विस्मृत कर दिया है।

राष्ट्र के समक्ष आदर्श :

पुराकाल से ही भारतवासियों का ऐसा विश्वास था कि ईश्वर और आत्मा आदि इन्द्रियातीत तत्त्व सनातन सत्य हैं और इनकी अनुभूति के लिए वे सतत् प्रयत्नशील रहे हैं। ईश्वर या आत्मा की अनुभूति को व्यक्ति या राष्ट्र के लिए सर्वोच्च लक्ष्य माना गया था। इन इन्द्रियातीत आदर्शों में इतनी रुचि होने का क्या कारण था? इसका कारण इस तथ्य में ढूंढ़ा जा सकता है कि बीच-बीच में इस देश में दैवी गुणों तथा सच्चे आध्यात्मिक ज्ञान से परिपूर्ण महापुरुषों का आविर्भाव होता रहा है। पाश्चात्य जगत को यदि 'विज्ञान का घर' कहें, तो निःसंदेह भारत को 'धर्मों और आध्यात्मिक ज्ञान का घर' माना जा सकता है। भारत में सामाजिक आचार-संहिताओं का निर्माण आध्यात्मिक पूर्णता या मोक्ष प्राप्त करने के उद्देश्य से आध्यात्मिक जीवन की सुदृढ़ नींव पर किया गया। समाज का हर व्यक्ति अपने जन्मजात गुणों के अनुसार विवेकपूर्वक अपने कर्तव्यों को पूरा करके

आध्यात्मिक पूर्णता या मोक्ष प्राप्त कर सकता था। पूर्वकाल के महापुरुषों का यह दृढ़ विश्वास था। ये विचार ग्रन्थों के जड़ पृष्ठों में ही नहीं, अपितु आचरण में उतारे जाते थे। इतिहास ऐसे आचरण के यथेष्ट दृष्टान्त देता है।

शक्ति–परीक्षण :

एक पाश्चात्य दार्शनिक ने एक बार कहा था, 'हमारे पास एक–दूसरे से प्रेम करने को प्रेरित करने वाले तो नहीं, परन्तु एक–दूसरे से घृणा तथा कलह करने को उकसाने वाले पर्याप्त धर्म हैं।' दूसरे शब्दों में कहें तो 'हम धर्म की गौण बातों को लेकर आपस में झगड़ते रहते हैं।'

क्या ईश्वर ने ही सभी प्राणियों में प्राण–संचार नहीं किया है? श्रीरामकृष्ण कहते थे कि गाँव के तालाब के पदार्थ को कोई 'जल' तो कोई 'पानी' कहता है। जीवन के सभी रूपों को क्रियाशील बनाने वाली शक्ति की विभिन्न धर्म के अनुयायियों द्वारा विभिन्न प्रकार से अनुभूति और उपासना की गयी है। आज भी लोग इस मूलभूत सत्य से अनभिज्ञ रहकर आपस में झगड़ते हुए कहते हैं, 'हमारे भगवान बड़े हैं, तुम्हारे छोटे हैं।' या 'हमारा धर्म सत्य है, तुम्हारा धर्म झूठा है।' मनुष्य की इस अज्ञानता पर भगवान शायद हँसा करते होंगे।

यदि ईश्वर हमारे लक्ष्य हैं, तो आध्यात्मिक जीवन ही पथ है। भय, क्रोध, चिन्ता आदि ईश्वर की ओर ले जाने वाले मार्ग की बाधाएँ है। सम्भवत: वे भक्त की ईश्वर में विश्वास–निष्ठा की परीक्षाएँ हैं। जब भौंकता हुआ कुत्ता हमें काट खाने को दौड़ता है, तो हम घर के मालिक को पुकारते हैं। घर का मालिक आकर कुत्ते को शान्त करके हमारा स्वागत करता है। जब कभी आपको मानसिक कठिनाइयाँ सताती हैं, तो आप भगवान को पुकारकर और उनकी शरण में जाकर राहत पाते हैं। अँधेरा हो, तो क्या हम केवल 'यहाँ अँधेरा है, अँधेरा है'– चिल्लाकर ही अँधेरे को मिटा सकते हैं? केवल प्रकाश ही अँधेरे को मिटा सकता है। चिन्ता व भय से त्रस्त हो जाने पर, केवल उनका रोना रोने से हमें राहत नहीं मिल सकती। उनसे बच निकलने के लिए हमें ज्ञान के प्रकाश की जरूरत है। हमारे मन और हृदय को प्रबुद्ध हो जाना चाहिए।

चिन्ताएँ मिटें, हृदय और मन खिलें :

चिन्ता हमारे जीवन को निगल जाने में समर्थ एक अति घातक शक्ति है। दीमक लगे चन्दन–वृक्ष की जड़ों के समान एक चिन्ताग्रस्त व्यक्ति उचित निर्णय तथा विवेक की क्षमता को खोकर विनाश के गर्त में जा सकता है। वह भूल जाता है कि उसके भीतर अनन्त शक्तियाँ छिपी हैं। वह खेद करता है, 'मैं मूर्ख, दुर्बल तथा अक्षम हूँ।' वह आलस्य की गोद में सोकर, इन्द्रियों का दास बनकर, भौतिक सुखों की छाया में पलता है, और क्रोध तथा घृणाभाव के कारण अपने भाइयों के प्रति हिंसा में लिप्त होकर भस्मासुर की भाँति अपने सृष्टा पर ही प्रकार करता है। आज भारत में ईश्वर या धर्म के नाम पर जो खून–खराबा हो रहा है, इसका मूल कारण आधुनिक मानव में ही निहित है। आधुनिकता के छद्मवेष में वह चिन्ता, भय व अन्य मनोविकारों से ग्रस्त होकर स्वार्थी, संकीर्ण तथा चंचल हो उठा है। मानव–सभ्यता को विध्वंस के कगार पर जाने से रोकने हेतु लोगों के हृदय में भाईचारे, उदारता तथा नि:स्वार्थता का विकास होना चाहिए। व्यक्ति के भले होने पर, उसके मन से चिन्ताएँ हटेंगी तथा प्रेम, मित्रता व सहयोग–भाव को स्थान मिलेगा। तब सर्वत्र तुष्टि, शान्ति, सुख एवं हित की सुरभित वायु प्रवाहित होगी। समाज की उन्नति एवं सुख के लिए आज हमें इसी की जरूरत है।

(क्रमशः)

खेद

संघशक्ति के अगस्त, 2022 के अंक में मशीन पर पृष्ठ लगाने वाले की भूल से पृष्ठ 5 पुन: पृष्ठ 7 की जगह लग गया, जिससे पाठकों को पृष्ठ 7 पढ़ने को नहीं मिला। इस असुविधा के लिए हमें खेद है।

पृथ्वीराज चौहान

– विरेन्द्रसिंह मांडण (किनसरिया)

संपर्क दायरा, व्यक्तित्व और आरम्भिक जीवन (भाग–2)

राजधानी और राज्याभिषेक :

रासो का कथानक तो पृथ्वीराज को प्रचुरता से दिल्ली पर केन्द्रित रखता है। कालक्रम में रासों के आसपास ही बने पृथ्वीराज प्रबंध में भी वही धारणा दिखती है। पर अन्य सभी ग्रन्थ[1] पृथ्वीराज की राजधानी और कर्मभूमि अजमेर को ही बताते हैं। पृथ्वीराज के अब तक प्राप्त सभी शिलालेख उनके मूल राज्य क्षेत्र में ही मिलते हैं। (अपवादः मदनपुर शिलालेख), ना कि दिल्ली या उसके आसपास जो वैसे भी तोमर शासित क्षेत्र था। फारसी स्रोत भी पृथ्वीराज को अजमेर का राजा ही कहते हैं, व गोविन्दराज (तोमर) को दिल्ली का राजा। इस सबसे एक निष्कर्ष यह भी निकला कि रासो का रचनाकाल तब का है जब दिल्ली एक साम्राज्य-रूपी केन्द्रीय सत्ता का प्रतीक बन गयी थी। यही रासो को दिल्ली केन्द्रित होने के लिए प्रेरित करता है। इस पर आगे के अंकों में विस्तार करेंगे।

पृथ्वीराज को अजमेर का सिंहासन मिलने का वो महत्त्वपूर्ण क्षण 1177 ई. में आया जब पिता सोमेश्वर का अन्तिम शिलालेख आता है और पुत्र का प्रथम (आंवलदा और बड़ला)।

अजयमेरु की राजशक्ति पर आरुढ़ होते समय पृथ्वीराज मात्र 14 वर्ष के थे। कुछ वर्षों तक राज-काज उनकी माता कर्पूरीदेवी और प्रधानमंत्री कदम्बवास ने ही सम्भाला।

आरम्भिक कार्यकाल :

पृथ्वीराजविजय महाकाव्यम चाव से बताता है कि कैसे कदम्बवास की बुद्धि से पृथ्वीराज कम आयु में ही अधिक से अधिक धनी होते जा रहे थे। बाद की सदियों में ''कैमास बुद्धि'' जैसी उक्तियाँ भी प्रचलित हुई। ये धन संभवतः भुवनैकमल्ल (आगे वर्णित) के नेतृत्व और कदम्बवास के मार्गदर्शन में हुए उन सैन्य अभियानों से आया जो कि पृथ्वीराज के आरम्भिक राज्यकाल में हुए थे और जिन पर हम अभी विस्तार करेंगे।

सिंहासन पर आने के कुछ समय बाद ही पृथ्वीराज एक खरे क्षत्रिय की भाँति युद्धों में तत्परता से अपनी तलवार का वजन गिनाने लगे। पृथ्वीराजविजय के रचयिता जयानक ने जिस समय अजमेर नरेश की सैन्य गतिविधियों को अंकित किया है, तभी वो पृथ्वीराज के मुखमण्डल पर दाढ़ी मूंछ आने की ठीक शुरुआत होती बताते हैं।[2]

राजमाता कर्पूरीदेवी ने अपने पुत्र के सैन्य पक्ष को प्रबल बनाने और भीतर-घात के प्रति सुरक्षा देने हेतु पूर्व दिशा की अपनी मातृभूमि अर्थात् कलचुरि राज्य से निकट सम्बन्धी भुवनैकमल्ल को बुलाया था। भुवनैकमल्ल बहुत अनुभवी योद्धा थे। फारसी स्रोतों के अनुसार भुवनैकमल्ल तराइन के दूसरे युद्ध में उपस्थित थे। जैन ग्रंथों की 1180-90 ईस्वी के दशक की जानकारी है कि कदम्बवास का प्रशासनिक व नीतिगत निर्णयों में प्रबल प्रभाव इन वर्षों में भी रहा। कदम्बवास की बुद्धि और भुवनैकमल्ल के सैन्य अनुभव के दो कन्धों पर खड़े होकर युवा पृथ्वीराज चौहान ने उत्तर भारतीय क्षितिज को अपने चक्रवात की चपेट में लिया।

उत्तराधिकार के कड़वे घूँट :

कथानक इस प्रकार है कि बारह वर्ष पूर्व (विग्रहराज के पुत्र) अपने बड़े भाई अपारगांगेय की मृत्यु से शान्त बैठे नागार्जुन चौहान 1177 ई. के अन्त में अजमेर सिंहासन पर दावा ठोकने आ गए। पृथ्वीराज की पहली बड़ी भिड़ंत नागार्जुन से ही हुई। इस घर्षण की पृष्ठभूमि कुछ पीढ़ियों पीछे जाती है। विग्रहराज और सोमेश्वर चौहान की माताएँ राजा अर्णोराज की दो रानियाँ–

क्रमशः सुधवा और काञ्चनदेवी थीं। पृथ्वीराजविजय काञ्चनदेवी के वंशजों के राजकाल में ही लिखा गया है। ग्रन्थ में सुधवा के पुत्रों का वृत्तांत अनेक स्थानों पर जिस भाषा से दिया गया है, वो स्पष्ट करता है कि दोनों परिवारों के सम्बन्ध अच्छे नहीं थे। जब तक विग्रहराज जीवित थे, सोमेश्वर ने चौलुक्य ननिहाल (पाटन) में समय बिताया।

पहले एक पुत्र को पृथ्वीभट चौहान के हाथों खोने के बाद तोमर कुलकन्या देसलदेवी नागार्जुन सहित अपने पैतृक दिल्ली में थीं, इस आशा में कि अवसर मिलने पर तोमर सहायता से पुत्र को अजमेर का सिंहासन मिल जाए।

मध्यकाल का मानक था कि किसी भी राज्य में सत्ता परिवर्तन को राजनैतिक अस्थिरता के रूप में अवसर जान कर अक्सर पड़ोसी या विरोधी लोग नए राजा को परखने आक्रमण कर दिया करते थे। सिंहासन पर अवयस्क पृथ्वीराज के आते ही नागार्जुन ने कुछ सामंतों को अपने साथ लेकर चौहान राज्य में ही स्थित गुड़पुर नामक दुर्ग पर अधिकार कर लिया। जयानक अनुसार पृथ्वीराज ने अपने सेनापतियों के लिए रुके बिना ही प्रतिरोध में अपनी सेना लेकर इस दुर्ग पर भीषण आक्रमण कर दिया[3]। नागार्जुन कायरतापूर्वक परिवार और सेना को रण में ही छोड़कर भाग गया। नागार्जुन की सेना ने अन्तिम सैनिक तक युद्ध किया और उनके सभी सैनिक मारे गये। पृथ्वीराज फिर नागार्जुन के राजपरिवार, जिसमें देसलदेवी व अन्य महिलाएँ थीं, को (बंदी रूप में?) अपने साथ अजमेर ले गया।

जिनकी निष्ठा क्षीण हो उन्हें चेतावनी देते पृथ्वीराज ने मृत शत्रु सैनिकों की मुंडमाला अजमेर दुर्ग के तोरण पर लटकवा दी। तब किसी भी नए राजा के लिए सिंहासन के प्रति निष्ठा सुनिश्चित करना और विद्रोह को समूह नष्ट करना पहला और महत्तवपूर्ण कार्य होता था। भविष्य में कोई विद्रोह/चुनौती न मिले ये राजा के हित ही नहीं, राज्य की स्थिरता के लिए भी आवश्यक होता था। अतएव यह कार्य कठोरता से किया जाता था। राजनीति की इस स्वाभाविक क्रूरता के पर्याप्त उदाहरण मिल जाते हैं, जैसे पृथ्वीराज से कुछ वर्ष पूर्व ही कुमारपाल चौलुक्य (सोलंकी) ने अपने अधीनस्थ किन्तु विद्रोह कर चुके उज्जैन के राजा बल्लाल के कटे सर को भी यूँ ही वाडनगर दुर्ग के द्वार पर लटकाया था[4]।

समीक्षा :

ऊपर दिए गए गुड़पुर की सटीक भौगोलिक स्थिति तो अब नहीं मिलती। श्री दशरथ शर्मा व रामबृक्ष सिंह का अनुमान है कि ये आज का गुडगाँव है। हरिहर निवास द्विवदी जी असहमत होने का कारण ये बताते हैं कि यदि गुड़पुर तोमरों की दिल्ली से इतना निकट (यानि अजमेर से दूर) होता तो अजमेर से चौहानों की इतनी त्वरित और भीषण प्रतिक्रिया नहीं आती। सो नागार्जुन निश्चित ही गुडगाँव से भी दक्षिण में आ चुका था। नागार्जुन की चुनौती गंभीर थी इसका समर्थन कुछ चौहान वंशावलियाँ करती हैं जिनमें नागार्जुन को चौहान शासक (संभवतः अल्प काल के लिए) के रूप में स्थान मिला है। पर इससे भी हमें यह नहीं पता चलता कि गुड़पुर आखिर कहाँ था, क्योंकि श्री विंध्यराज चौहान को भी गुड़पुर नामक या मिलता जुलता कोई प्राचीन दुर्ग दिल्ली और अजमेर के बीच नहीं मिला। पर इस उत्तराधिकार युद्ध का महत्त्व तो इसी से दिख जाता है कि देसलदेवी सहित तोमर परिवार की महिलाएँ गुड़पुर दुर्ग में थीं और नागार्जुन की सेना उन्हें बचाने को अन्त तक युद्ध करती रही।

जहाँ तक पृथ्वीराज के सेनापतियों के बिना अकेले ही आ जाने का प्रश्न है, तो पृथ्वीराज की आयु और अनुभव का अभाव देखते हुए इसकी सम्भावना बहुत कम है। पृथ्वीराज मार्गदर्शन के साथ ही होंगे पर उनके सक्रिय भाग लेने के कारण जयानक जी को अपनी बात को सजाने का अवसर मिल गया।

तोमरों का अपने भाणेज नागार्जुन को आश्रय देना तो सिद्ध है, इसके अतिरिक्त सैन्य सहायता देने की सम्भावना भी प्रबल है। विग्रहराज काल में तोमरों व अजमेर सत्ता के सम्बन्ध मधुरतम हो गए थे, जिसमें तब

(शेष पृष्ठ 27 पर)

गतांक से आगे

यदुवंशी करौली का इतिहास

– राव शिवराजपालसिंह इनायती

महाराजा जयसिंह पाल :

महाराजा मदनपाल के निसंतान स्वर्गवासी होने के बाद गद्दी के लिए हाड़ोती के तत्कालीन राव लक्ष्मण पाल ''हाड़ोती का राव करौली का राजा'' वाले प्रचलित सिद्धान्त के अनुसार वारिस थे, लेकिन महाराजा मदनपाल की बसवा वाली रानी ने अपने आपको गर्भवती घोषित कर दिया। राव लक्ष्मण पाल के लिए यह भारी सदमा असहनीय था, और वह महाराजा मदनपाल के स्वर्गवास के 25 दिन के अन्दर ही स्वयं भी परलोक सिधार गए। अंग्रेज पॉलिटिकल एजेंट ने अस्थाई व्यवस्था के तहत मदनपाल के श्वसुर वृषभान सिंह को शासन व्यवस्था के हकूक सम्भला दिए, जिसे उन्होंने नए राजा के गद्दीनशीन होने तक पूरी योग्यता और समझदारी से निभाया व कहीं भी अव्यवस्था नहीं होने दी।

महाराजा मदनपाल के समय से ही राज्य के अधिकारियों और मुख्य जागीरदारों के साथ उनकी अच्छी पैठ थी जो सितम्बर, 1869 से दिसम्बर, 1870 के इनके कार्यकाल के समय बहुत काम आई। राव लक्ष्मण पाल की मृत्यु के बाद हाड़ोती में जयसिंह पाल को राव की गद्दी मिली, जिसे बाद में गवर्नर जनरल के आदेश से जनवरी, 1871 में करौली की गद्दी पर बिठाया गया। राजा बनने के बाद इनका शासनकाल अति अल्प काल का रहा और बीमारी से नवम्बर, 1875 में इनका भी स्वर्गवास हो गया। अपने अल्प शासनकाल में करौली की साफ-सफाई पर विशेष ध्यान देते हुए शहर के मुख्य बाजारों को पत्थरों से पटवाया गया, इसके साथ ही करौली से जयपुर राज के हिंडौन और कुशालगढ़ (गंगापुर) कस्बे तक भी सड़कें बनवाई गई। करौली के पश्चिम में कुशालगढ़ की रियाया ने जब किसी कारण से जयपुर राज से खिन्न हो इनसे प्रार्थना की कि एक नया कस्बा बनवाया जाए, इस अरदास को सुनकर कुडगांव के पास जयनगर नाम से बसाया गया लेकिन बाद में वहाँ से लोग नहीं आए और अब यह बस्ती कुडगांव के विस्तार में ही खो गई है।

महाराजा जयसिंह पाल के समय में दो भगोड़ों को शरण देने के मसले पर इनायती के राव से मनमुटाव हुआ और इनायती खालसा कर ली गई, जिसे बाद में राजपूताना के पॉलिटिकल एजेंट के हस्तक्षेप से वापस बहाल किया गया। इनायती के बाद यही बखेड़ा भरतून के ठाकुर से हुआ, जिसे भी कुछ आर्थिक दण्ड देकर बहाल कर दिया।

महाराजा अर्जुन पाल :

जयसिंहपाल ने मृत्यु से पहले ही पॉलिटिकल एजेंट को उनके बाद हाड़ोती के राव अर्जुनपाल को वापिस बनाने की इच्छा जाहिर कर दी थी, इसलिए सुजानपाल ने सब बखेड़ा खड़ा किया तो पॉलिटिकल एजेंट कर्नल राइट ने उसे सख्ती से दबा दिया और अर्जुनपाल को जनवरी, 1876 में गद्दी पर बिठा रिवाज के अनुसार उनको खिलअत और सरोपाव भेंट कर दिया। पॉलिटिकल एजेंट ने सुजानपाल के व्यवहार से क्षुब्ध होकर उन्हें हाड़ोती के राव भी नहीं बनाया और भंवरपाल जी को हाड़ोती का राव घोषित कर दिया। महाराजा अर्जुनपाल के शासनकाल में ही अंग्रेज सरकार के साथ प्रसिद्ध नमक संधि हुई थी, जिसके तहत करौली रियासत को कुल लगभग 5800 रुपए वार्षिक दिए जाना स्वीकार हुआ। इनके शासनकाल में ही राज्य में सात और प्राथमिक विद्यालय खोले गए, और हाई स्कूल में भी विद्यार्थियों की संख्या बढ़े इस पर ध्यान दिया गया। अस्पताल के लिए भी अपर्याप्त भवन देखते हुए वर्तमान चिकित्सालय भवन का निर्माण इन्हीं के शासनकाल में हुआ। एक और महत्त्वपूर्ण कार्य स्थानीय नगरपालिका निकाय बनाकर किया जिसमें जनता के प्रतिनिधियों को शासन में नाम मात्र को ही सही, अधिकार दिए गए। महाराजा अर्जुनपाल के शासनकाल में एक बार फिर से आर्थिक और प्रशासनिक व्यवस्था चरमराने लगी तो पॉलिटिकल एजेंट ने सारे अधिकार अपने हाथ में ले लिए। इसी हालत में यह शासक भी सितम्बर, 1886 में निसंतान देवलोक हो गए। इनकी मृत्यु के उपरान्त हाड़ोती के राव भंवर पाल को करौली का वारिस बनाया गया और इनके चचेरे भाई भोमपाल जी को हाड़ोती की गद्दी मिली।

(क्रमशः)

राज की लाज

– धर्मेन्द्रसिंह आंबली

इतिहास, इति+आ+हास, अर्थात् इस तरह का भूतकाल था। इसमें वर्णित कथाएँ दंतकथाएँ नहीं हैं, बल्कि घटित हुई घटनाएँ हैं। आज इतिहास की बात जब लोगों से कहते हैं तो उन अनूठी कथाओं के सबूत माँगते हैं। भ्रमित हैं, नादान हैं या ईषालु हैं जो सबूत की बात करते हैं। उन अद्‌भुत बलिदानों की स्मृति में निर्मित मंदिर, तीर्थ, डेरी, स्तम्भ, थान जो जगह-जगह स्थापित हैं, उन्हें दिखाई नहीं देते। प्रमुख इतिहासकारों की माने तो भारत के इतिहास में से क्षत्रियों का इतिहास निकाल दिया जाए तो पीछे बचता ही क्या है? सत्य तो यह है कि भारत के इतिहास को सच्चे रूप में तो उभरने ही नहीं दिया गया। यदि सत्य इतिहास प्रस्तुत होता तो परिणाम स्वरूप प्रत्येक क्षत्रिय परिवार तीर्थ, प्रत्येक क्षत्रिय देव रूप और प्रत्येक क्षत्राणी सती रूप में दिखाई देती। परन्तु सोने की चिड़िया का रूप लिए इस राष्ट्र पर स्वार्थी और क्रूर आक्रमणकारियों ने हमारे धर्म और इतिहास को दफन करने का प्रयास किया।

कुछ विदेशी इतिहासकारों ने, जिनका न राजपूतों से लगाव था और न मुसलमानों से नफरत, इतिहास को जैसा था, उस रूप में लिखने की चेष्टा की। किन्तु हमारे ही देश में वर्तमान में कुछ ऐसे तत्व हैं जो नहीं चाहते कि राजपूतों का इतिहास यथारूप में लोगों तक पहुँचे। यही नहीं, आज तो न तो गीता, वेद, उपनिषद पढाये जाते हैं और न राजपूतों की अखण्ड शौर्य शृंखला पाठ्यक्रमों में आती है। जिसके सीने में दिल होता है, यह स्थिति देखकर उसे दर्द होता है और जिसे इतिहास की सत्य जानकारी है, उसे इस स्थिति के प्रति अकुलाहट सोने भी नहीं देती। हमारा सत्य प्रकट इतिहास तो पूरे विश्व में महानता प्राप्त है, उसे ही कुचले जाने की साजिश की जा रही है, तो गाँव में, ढाणियों में, कुटियाओं में रचे छोटे-छोटे इतिहास को कौन टटोलेगा? वही, जिसे पीड़ा है, जिसे अकुलाहट है।

वर्णव्यवस्था के विकृत रूप में ऊँच-नीच का प्रचलन चल पड़ा पर क्षत्रिय राजा के मन में ऐसा भाव कभी नहीं रहा। उसके लिए तो उसकी प्रजा के साथ पुत्रवत भाव रहा और ऐसा ही व्यवहार रहा। उसके ऐसे पवित्र भाव का प्रभाव प्रजा पर भी पड़े बिना नहीं रहता। उत्तर गुजरात के थराद-वाव क्षेत्र की घटना है। थराद-वाव क्षेत्र में वाघेला राजपूतों का राज्य था। वहाँ एक छोटे से गाँव में एक दलित परिवार में एक लड़का जब जवान हुआ तो उसके पिता ने उसकी शादी की बात चलाई। लड़के को पता चला तो उसने शादी करने से इन्कार कर दिया। पिता ने शादी से इन्कार करने का कारण पूछा तो लड़के ने कहा कि मेरी शादी में यदि मेरे राज के दरबार (राजा) न हों तो मुझे शादी नहीं करनी है। पिता ने बहुत समझाने का प्रयास किया पर लड़का नहीं माना और अपनी शर्त पर अड़ा रहा। मजबूरन लड़के का पिता राजा के दरबार में पहुँचा और अपनी पीड़ा बताई कि बापु (राजा) आप बारात में पधारें तभी मेरा लड़का शादी करेगा। सुनते ही बापु के दिल में क्षत्रियत्व खिल उठा। राजा ने कहा कि जिसके राज्य में प्रजा खुश न हो, वह राजा किस काम का? राजा ने कहा तुम चिन्ता छोड़ो मैं बारात में आऊँगा। ठाट-बाट से, गाजे-बाजे के साथ, अनेकों घुड़सवारों को लेकर मैं आऊँगा। शादी का पूरा खर्चा मैं करूँगा। खाना खिलाने की व्यवस्था भी मेरी ओर से होगी, तुम तुम्हारे लड़के को आश्वस्त कर दो।

समय आने पर दुल्हा अत्यन्त प्रसन्नता की मुद्रा में घोड़े पर चढा और पीछे पूरी बारात ऐसी चली जैसे किसी रजवाड़े घराने की शादी की बारात हो। लड़के के ससुराल में पूरा गाँव बारात देखने गलियों, चौराहों, मेड़ी पर चढ़कर उमड़ आया। बारात का स्वागत जैसे पूरा गाँव ही कर रहा हो। गरीब घराने के दलित परिवार के तो खुशी का कोई

गतांक से आगे

महान क्रान्तिकारी राव गोपालसिंह खरवा

– भँवरसिंह मांडासी

शिक्षा प्रचार कार्य :– राजस्थान के उक्त कालखण्ड में यहाँ के लोगों का शिक्षा की तरफ कम ही ध्यान गया था। राव गोपालसिंह ने इस कमी को अनुभव किया। उनकी मान्यतानुसार राजपूत अपनी सैनिक विरासत के बल पर श्रेष्ठ सैनिक तो उस काल में भी बने रहे किन्तु शिक्षा की दृष्टि से शून्य थे। शिक्षा विहीन मस्तिष्क का समयोचित चहुँमुखी विकास होना दु:साध्य था। शिक्षा के क्षेत्र में राजपूतों का पिछड़ापन तब सर्वविदित था। राव साहब का विश्वास था कि शिक्षित हुए बिना सैनिक जातियों में राजनैतिक चेतना के भाव जागृत होना असम्भव है। राजपूतों एवं यहाँ की अन्य प्रमुख सैनिक जातियों को देश के स्वतंत्रता संघर्ष में भाग लेने को तत्पर करने के कार्य में उनका शिक्षित होना परमावश्यक था। राजपूत अशिक्षित होने की वजह से अपने शानदार अतीत को भूला चुके थे।

राव गोपालसिंह ने राजपूतों, चारणों, पुरोहितों एवं ब्राह्मणों के पढ़ने के इच्छुक अनेक बालकों को पठनार्थ छात्र वृत्तियाँ प्रदान करके अजमेर के आर्य समाज छात्रावास में भरती कराया था। अजमेर मेरवाड़ा और मारवाड़ के समीपस्थ अनेक ग्रामों में प्रचारक-उपदेशक भेजकर ग्रामवासियों को शिक्षा का महत्त्व बतलाने तथा बालकों को पढ़ाने के लिए प्रेरित करने का कार्यक्रम भी उन्होंने चला रखा था। सुमेल, बाबरा, बलूंदा, आलणियावास, गोविन्दगढ़ आदि ग्राम के ठाकुरों ने राव गोपालसिंह द्वारा शिक्षा प्रसार हेतु किए गए सद्प्रयासों की मुक्त कंठ से प्रशंसा की थी एवं उन्हें धन्यवाद के पत्र लिखकर आभार प्रकट किए थे।

राव गोपालसिंह ने इस शताब्दी के प्राथमिक चरण में ग्रामीण जनता में राष्ट्रीय चेतना जागृति हेतु अनेक उल्लेखनीय कार्य किए थे। उन सबका सविस्तार उल्लेख किया जाना सम्भव नहीं है। सन् 1915 ई. के असफल किन्तु गोली, फांसी एवं कालेपानी की सजा के खतरों से परिपूर्ण स्वतंत्रता संग्राम में अपने ठिकाने के छिन जाने की तनिक भी परवाह न करते हुए उन्होंने अदम्य साहस के साथ क्रान्ति-कार्य किए थे।

राजनीति से क्रान्ति की ओर :– उक्त समय में रूस-जापान युद्ध चल रहा था। युद्ध में जापान को मिली सफलता ने भारतीयों में भी स्वातन्त्र्य भावना का पुनरोदय कर दिया था। सन् 1857 ई. के स्वातंत्र्य संघर्ष को क्रूरतापूर्वक कुचल दिये जाने के पश्चात् अंग्रेजों के प्रति भारतीयों के मन में छिपी घृणा एवं धधकती प्रतिशोधाग्नि शनै: शनै: प्रज्वलित होकर तब क्रान्ति विस्फोट का रूप लेने जा रही थी। उक्त पुनर्जागृति का प्रमुख स्तम्भ स्वामी दयानन्द सरस्वती, हिन्दू धर्म और समाज में नए सुधारवादी विचारों का शंखनाद कर चुका था। स्वामी दयानन्द के इस नारे ''सुराज्य से स्वराज्य अच्छा है''- को भारतीयों ने हृदयंगम कर लिया था। ''स्वराज्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है'' के उद्घोषक लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक राष्ट्रीय राजनीति के रंगमंच पर युग-पुरुष के रूप में अवतरित हो चुके थे।

सन् 1898 से 1905 ई. तक भारत के वायसराय एवं गवर्नर जनरल के पद पर आसीन लार्ड कर्जन ने सन् 1905 ई. में बंगभंग का देश विघटनकारी कार्य करके अंग्रेजी शासन के प्रति भारतीयों में पनपते असन्तोष में घृताहुति का सा काम किया। बंगभूमि के प्रबुद्ध एवं जागरूक बुद्धिजीवियों को कुटिल अंग्रेज के उस विघटनकारी कार्य ने अति विक्षुब्ध बना डाला। बंगाल के अति साहसी युवकों ने अंग्रेज सत्ता के विरुद्ध प्राणों की बाजी लगा कर क्रान्ति युद्ध का उद्घोष कर दिया। स्वातंत्र्य

संघर्षों से ओत-प्रोत राजस्थान का रक्त रंजित प्राचीन इतिहास समग्र भारत के गौरव और स्वाभिमान का प्रतीक इतिहास रहा है। बंगाल के साहसी वीर पुत्रों की प्रेरणा का स्रोत भी तब राजस्थान का वही इतिहास था-जो मेवाड़ के महाराणा प्रताप और दुर्गादास राठौड़ द्वारा मुगल साम्राज्य सत्ता के विरुद्ध लड़े गये छापामार संघर्षों एवं युद्धों के उल्लेखों से जगमगा रहा था। राजस्थानी वीरों की उन मृत्युंजयी गाथाओं से प्रेरणा ग्रहण करके बंगभूमि के वीर पुत्रों ने नये स्वातंत्र्य युद्ध की यज्ञाग्नि प्रज्वलित कर दी थी।

राजस्थान के अज्ञानावृत, अन्धकारपूर्ण उस काल-खण्ड में नवोदित प्रकाशपुंज की भाँति राव गोपालसिंह खरवा और बारहठ केशरीसिंह सौदा का उदय हुआ। इन दोनों नर-रत्नों ने राजस्थान के सुप्त गौरव और स्वाभिमान की पुन: जागृति हेतु क्रान्ति के कठिन मार्ग को अपनाया जहाँ सम्पत्तिविनाश और प्राणनाश के दोनों खतरे मौजूद थे।

राव गोपालसिंह, अंग्रेजों के विरुद्ध लड़े जा रहे अहिंसक असहयोग आन्दोलन के हृदय से कभी समर्थक नहीं रहे और न वे अपने को उसमें समाहित कर सके। लोकमान्य तिलक के उग्र राष्ट्रीयतावादी विचारों के अनुयायी गोपालसिंह, शस्त्र-शक्ति में विश्वास रखने वाले क्षात्रधर्म के उपासक व्यक्ति थे। क्षात्र कर्म के माध्यम से ही देश को गुलामी से मुक्त किया जा सकता है ऐसी उनकी मान्यता थी। वे कहा करते थे-''जब-जब देश को विदेशी आक्रान्ताओं की पराधीनता से मुक्त कराने के अवसर आए हैं, शस्त्र-शक्ति के बल पर रक्तरंजित संघर्षों के माध्यम से देश को दासता की जंजीरों से मुक्त किया जा सका है। रक्तहीन क्रान्ति से प्राप्त स्वतंत्रता अल्पकालिक होती है, व चिरस्थाई नहीं होती है। सस्ते में प्राप्त स्वतंत्रता की रक्षा के लिए, सीमा पार के हमलों से देश को बचाने के लिए, देश के भीतर उत्पन्न चोर-डाकुओं के उपद्रवों से जन-जीवन को सुरक्षित रखने के लिये एवं आम जनता के जीवन, धन और इज्जत की सुरक्षा की गारंटी के लिए भी एकमात्र शस्त्र-शक्ति ही अन्तिम करणीय उपाय बचा रहता है।'' शस्त्र-शक्ति की अनिवार्यता एवं महत्ता की चर्चा करते समय शक्ति की प्रतीक भवानी तलवार को लक्ष्य करके कहते थे-

मंडन ध्रम सत् न्याय री, खंडन अनय अनीत।
खल नाशक शासक प्रजा, है असि तूं जगजीत।।

राव गोपालसिंह उन लोगों में से थे, जो ब्रिटिश सत्ता को क्रान्तिकारी कार्यों से उखाड़ फैंकने के कार्य में प्रवृत हो चुके थे। प्रथम विश्व युद्ध के समय को उपयुक्त अवसर जानकर देश के अन्य क्रान्तिकारी नेताओं के साथ मिलकर उन्होंने अंग्रेजों के विरुद्ध क्रान्ति का शंखनाद कर दिया था। रासबिहारी बोस और शचीन्द्रनाथ सान्याल के संगठन में उनका नाम था। सन् 1915 के स्वातंत्र्य विद्रोह के समय अजमेर मेरवाड़ा में जन विद्रोह का संचालन करने एवं प्रान्त को अंग्रेजों के अधिकार से मुक्ति दिलाने के कार्य के अग्रणी नेता राव गोपालसिंह ही थे।

राजस्थान में क्रान्ति की ज्योति जगाने में अग्रणी राव गोपालसिंह खरवा व बारहठ केशरीसिंह शाहपुरा के अलावा जयपुर में जैन पाठशाला चलाने वाले अर्जुनलाल सेठी का नाम भी उल्लेखनीय है। अपने छात्रशिष्यों में देश भक्ति की भावना भरने एवं स्वातंत्र्य संघर्षों में भाग लेने हेतु उन्हें तैयार करने का उल्लेखनीय कार्य वह कर रहा था। ''अभिनव भारत समिति' नाम से उसने एक गुप्त संगठन खड़ा किया था, जिसके सदस्य देश हित में संघर्ष करने की शपथ लेते थे।

ब्यावर के सेठ दामोदरदास राठी राव गोपालसिंह के अभिन्न मित्र एवं विश्वस्त साथी थे। ब्यावर नगर के तत्कालीन प्रमुख उद्योगपति दामोदरदास राठी माहेश्वरी वैश्य थे। मारवाड़ का पोकरण कस्बा उनका पैतृक स्थान था। ब्यावर में आकर यहाँ के व्यापारिक क्षेत्र में उन्होंने ख्याति अर्जित कर ली थी। सर्वप्रथम राठीजी ने ब्यावर में अपने पिता खींवराजजी द्वारा स्थापित कृष्णा मील का विस्तार करके मेरवाड़ा के हजारों बेरोजगार लोगों को रोजगार में लगाने का प्रशंसनीय एवं जनहितकारी कार्य किया था।

श्यामजी कृष्ण वर्मा जो अपने क्रान्तिकारी विचारों

(शेष पृष्ठ 29 पर)

षोड़श (सोलह की संख्या) की प्रतिष्ठा

– कर्नल हिम्मत सिंह पीह

ETCHED IN BLOOD RAJPOOT GLORY

शीर्षक वाली पुस्तक के प्रकाशन उपरान्त मुझे एक विवाह समारोह में भाग लेने के लिए उदयपुर का सुअवसर प्राप्त हुआ। वहाँ महाराणा साहब को पुस्तक भेंट करने का मन बनाया। पूछताछ करने पर पता चला कि महाराणा साहब उन दिनों में मुम्बई पधारे हुए थे। परन्तु महाराणी साहिबा उदयपुर में ही बिराज रहे थे। मिलने का समय माँगा तो सहज ही में उन्होंने स्वीकृति प्रदान कर दी। निश्चित समय पर उनके निवास स्थान पर पहुँचकर पुस्तक भेंट की। पुस्तक का अवलोकन करते हुए उन्होंने फरमाया–''सोलह कहानियों का संकलन?'' मैंने अर्ज किया–''हुक्म सोलह कहानियाँ।'' उन्होंने तब फरमाया, ''सोलह की संख्या की बहुत प्रतिष्ठा है।'' उस समय उनका आशय समझे बिना ही ''हुक्म'' कहकर उनका अनुमोदन कर दिया।

महाराणी साहिबा की सरलता, सहजता, आत्मीयता और आवभगत से अभिभूत हो अपनी कृतज्ञता व्यक्त कर उनसे विदा ली।

रास्ते में सोचा कि सोलह की संख्या की प्रतिष्ठा से उनका आशय कदाचित मेवाड़ रियासत के सोलह उमरावों से होगा। और इसी निष्कर्ष के साथ इस विषय को 'डीलीट' कर 'रीसाइकल बिन' में डाल दिया।

हाल ही में पिछले हफ्ते अनायास ही षोडश की प्रतिष्ठा ने पुनर्जन्म लेकर मेरी जिज्ञासा को झकझोरा जिसकी परिणति है सोलह की संख्या से सम्बन्धित शोध और उसकी उपलब्धियाँ, जो प्रस्तुत है इस लेख में।

षोड़श का प्रयोग अनेकानेक स्थानों और विषयों में पाया जाता है। यह कहना कि इस संख्या ने अपनी मौजूदगी सभी जगहों और विषयों में सुनिश्चित कर रखी है, कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। इस संख्या ने गणित, विज्ञान, तकनीकि, बोली, धर्म, भाषा, आयु, खेल इत्यादि विषयों में अपनी प्रतिष्ठा का परचम फहरा रखा है।

सर्वप्रथम इस प्रतिष्ठित संख्या का प्रयोग पाया जाता है मार्कण्डेय ऋषि की आयु के रूप में। विधाता ने ऋषि मार्कण्डेय को मात्र सोलह वर्षों की आयु प्रदान की। जब वे सोलह वर्ष के हुए तो यमराज उनको लेने आ गये। ऋषि उस समय शिव की मूर्ति को साथ ले उपासना कर रहे थे। यमराज ने आव देखा न ताव मार्कण्डेय जी के चारों ओर फंदा डाल दिया। तब ऋषि ने शिव की मूर्ति को गले लगा लिया। नतीजन ऋषि के साथ भगवान शिव भी फंदे में फंस गये। इस अपमान के कारण शिव क्रोधित मुद्रा में आ गये और यमराज को यमलोक में पहुँचा दिया (मार दिया)। इस अप्रत्याशित घटना से संक्षिप्त समय के लिए ब्रह्माण्ड में घोर विपत्ति की स्थिति उत्पन्न हो गई और विधि के विधान में विघ्न पड़ गया। उत्पन्न हुई अव्यवस्था को यथावत करने के लिए भगवान शिव ने यमराज को पुनर्जीवित किया और साथ ही ऋषि मार्कण्डेय को अमरत्व प्रदान किया।

मार्कण्डेय प्रकरण के अतिरिक्त षोड़श की प्रतिष्ठा जहाँ जहाँ प्रतिष्ठित प्रतीत होती है उसका–मात्र प्रतिकात्मक–संक्षिप्त विवरण यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

सोलह संस्कार :

सनातन धर्म की संस्कृति संस्कारों पर ही आधारित है। मानव जीवन को पवित्र एवं मर्यादित संस्कारों के निर्माण से ही बनाना संभव है। समय–समय पर संस्कारों की संख्या भी बदलती रही है। परन्तु हमारे धर्मशास्त्रों में मुख्य रूप से निम्न सोलह संस्कारों की व्याख्या ही की गई है।

1. गर्भाधान, 2. पुंसवन, 3. सीमन्तोन्नयन, 4. जातकर्म, 5. नामकरण, 6. निष्क्रमण, 7. अन्नप्राशन,

8.चूड़ा-कर्म, 9. कर्णवेध, 10. विद्यारम्भ, 11. यज्ञोपवीत, 12. समावर्तन, 13. विवाह, 14. आवस्थ्याधान (वानप्रस्थ), 15. संन्यास, 16. श्रोताधान (अन्त्येष्टि-श्राद्ध संस्कार)

उपरोक्त सभी सोलह संस्कारों की विस्तृत जानकारी हमारे वरिष्ठ स्वयंसेवक स्व. श्री सूरतसिंह जी कालवा की पुस्तक **'सोलह संस्कार और संघ'** में भी उपलब्ध है।

सोलह कलाओं वाली है आत्मा :

पिप्पलाद ऋषि ने आत्मा को षोड़शी कहा है, यानी यह सोलह कलाओं वाली है। ये कलाएँ हैं -
1. प्राण, 2. श्रद्धा, 3. पृथ्वी, 4. आप, 5. अग्नि, 6. वायु, 7. आकाश, 8. इन्द्रिय, 9. मन, 10. अन्न, 11. वीर्य, 12. तप, 13. मंत्र, 14. लोक, 15.नाम और 16. कर्म।

ये कलाएँ आत्मा से उत्पन्न होकर उसी के चारों ओर फैली हुई हैं और उसी आत्मा में लीन हो जाती हैं।

सोलह तत्व हैं शरीर में :

वैज्ञानिकों का मानना है कि शरीर में भी प्रमुखत: सोलह तत्व हैं -

1. ऑक्सीजन, 2. हाइड्रोजन, 3. नाइट्रोजन, 4. कार्बन, 5. सल्फर, 6. फासफोरस, 7. सोडियम, 8. पोटेशियम, 9. कैल्शियम, 10. मैगनीशियम, 11. लीथियम, 12. क्लोरीन, 13. फ्लोरीन, 14. आयोडीन, 15. सिलीकॉन और 16. आयरन।

षोड़शोपचार (पूजा के सोलह अंग) :

षोड़शोपचार अर्थात् वे सोलह तरीके (विधियाँ) जिनसे देवी-देवताओं का पूजन किया जाता है। षोड़शोपचार पूजन में निम्न सोलह चरणों में विधिपूर्वक पूजन किया जाता है -

1. ध्यान, 2. आह्वान, 3. आसन, 4. पाद्य, 5. अर्घ्य, 6. आचमन, 7. स्नान, 8. वस्त्र, 9. यज्ञोपवीत, 10. गंधाक्षत, 11. पुष्प, 12. धूप, 13. दीप, 14. नैवेद्य, 15. ताम्बूल दक्षिणा जल आरती, 16. मंत्र पुष्पांजलि-दक्षिणा नमस्कार स्तुति।

षोड़शमातृका :

देवियाँ भी संख्या में सोलह मानी गई हैं -

1. गौरी, 2. पद्मा, 3. शचि, 4. मेधा, 5. सावित्री, 6. विजया, 7. जया, 8. देवसेना, 9. स्बधा, 10. स्वाहा, 11. लक्ष्मी, 12. शान्ति, 13. पुष्टि, 14. धृति, 15. तुष्टि और 16. आत्म देवता, ये सोलह मातृ कलाओं का समूह है।

सोलह महादान :

दान त्याग की ही अभिव्यक्ति है। सभी धर्मों में सुपात्र को दान देना परम कर्तव्य माना गया है। क्षात्र धर्म के अनुयायी के लिए तो यह अपरिहार्य है। दान-त्याग की भावना का सृजन करता है। त्याग से तत्काल शान्ति की प्राप्ति होती है।

किसी जरूरतमंद की सहायता करना दान देना ही है। परन्तु दान में दी गई वस्तु के बदले में किसी प्रकार का विनिमय नहीं होना चाहिए। दान जरूरतमंद को ही क्यों?

वृथा वृष्टि समुदेषु, वृथा तृप्तस्य भोजनम।
वृथा दानम् समर्थस्य, वृथा दीपो दिवापिच।।

हमारे धर्म ग्रंथों में कुछ दानों को विशेष बताया गया है। जैसे कि विद्यादान, अभयदान, कन्यादान, नामदान आदि। परन्तु कुछ दानों को महादान की श्रेणी में रखा गया है। वे इस प्रकार हैं -

1. तुलादान, 2. हिरैण्यगर्भ, 3. ब्रह्माण्ड, 4. कल्पवृक्ष, 5. सहस्त्रनाम, 6. कामधेनु, 7. अश्वरथ, 8. हस्तरथ, 9. हेमहस्तिरथ, 10. पंचनलागलक, 11. धरादान, 12. विसचक्र, 13. कल्पलता, 14. सप्त सागर, 15. रत्नधेनु और 16. महाभूत घटदान।

ये सभी दान सामान्य आर्थिक स्थिति वाले के लिए संभव नहीं है। इनमें से एक भी दान अगर किसी से सम्पन्न हो जाय तो उसका जीवन सफल हो जाता है। जो निष्काम भाव से इन सोलह महादानों को करता है उसको मोक्ष की प्राप्ति अवश्यंभावी है। ग्रहों की शान्ति के लिए भी दान देने का विधान है।

सोलह श्रृंगार :

भारतीय महिलाओं के जीवन में सोलह श्रृंगार का महत्त्व केवल आकर्षक दिखने के लिए, नख से शिखा तक सजने-संवारने का नहीं है। इसके पीछे अनेक

वैज्ञानिक तथ्य भी छिपे हैं। साथ ही स्वास्थ्य और सौभाग्य से इनका गहरा सम्बन्ध है।

सोलह शृंगार की कोई निश्चित परिभाषा या सूची नहीं रही है। देश और काल के अनुसार उसमें भिन्नता पाई जाती है। साहित्य में इसके सोलह अंग कहे गये हैं –

1. उबटन लगाना, 2. मंजन करना, 3. मिस्सी लगाना, 4. नहाना, 5. वस्त्र धारण करना, 6. केश संवारना, 7. काजल लगाना, 8. माँग में सिन्दूर भरना, 9. मेहन्दी लगाना, 10. ललाट पर बिन्दी, 11. पैर पर महावर लगाना, 12. ठोडी पर तिल, 13. शरीर पर गंध द्रव्य, 14. आभूषण पहनना, 15. फूलों की माला, 16. पान खाना।

सोलह प्रकार के आभूषणों को सोलह शृंगार नहीं कहा जा सकता है।

सोलह महाजनपद :

प्राचीनकाल में हमारे देश में राज्य या प्रशासनिक इकाइयाँ महाजनपद कहलाती थी। ईसा पूर्व छठी सदी में वैयाकरण पाणिनि ने 22 महाजनपदों का उल्लेख किया है। इनमें से तीन-मगध, कौशल तथा वत्स को महत्त्वपूर्ण बताया गया है।

बौद्धग्रन्थ ''अंगुत्तर निकाय'' महावस्तु में निम्न 16 महाजनपदों का उल्लेख है –

1. काशी, 2. कौशल, 3. अंग, 4. मगध, 5. वज्जि, 6. मल्ल, 7. चेदि, 8. वत्स, 9. कुरु, 10. पंचाल, 11. मत्स्य, 12. शूरसेन, 13. अश्मक, 14. अवन्ति, 15. गांधार और 16 कम्बोज।

षोड़श की प्रतिष्ठा को प्रतिष्ठापित करने के लिए ऊपर कुछ उदाहरण प्रस्तुत किये हैं जो विभिन्न पहलुओं का परिचय, विविध-विधान की विस्तृत जानकारी प्राप्त करने के लिए पाठकों को प्रेरित करेगी, ऐसा विश्वास किया जाना चाहिए।

पृष्ठ 19 का शेष

पृथ्वीराज चौहान

की भू-राजनैतिक परिस्थितियों और देसलदेवी से उनके प्रेम विवाह की मुख्य भूमिका रही। विग्रहराज के बाद उनके दोनों पुत्रों की तोमरों ने भरपूर सहायता की। इसी नीति से बिलबिला कर पृथ्वीभट चौहान (1166-69 ई.) ने मदनपाल तोमर पर आक्रमण भी किया। अबुल फजल और इंद्रप्रस्थ प्रबंध ने 1170 के दशक में तोमर बनाम सोमेश्वर संघर्ष का भी उल्लेख किया है।

लेकिन पृथ्वीराज और तोमरों के बीच किसी सैन्य संघर्ष के कोई साक्ष्य नहीं मिलते। यदि तोमरों ने खुलकर पृथ्वीराज का विरोध किया होता तो घर्षण के चिन्ह इतिहास पटल पर कहीं न कहीं अंकित होते। परिस्थिति-जन्य साक्ष्य तो यही कहते हैं कि आरम्भिक वर्षों में पृथ्वीराज और तोमरों के सम्बन्ध ठंडे और असहजता से भरे थे। इसकी एक और झलक तब मिलती है जब 1177 ई. में पृथ्वीराज के राज्याभिषेक के ठीक बाद उनके छोटे भाई हरिराज चौहान को हाँसी नियुक्त किया जाता है[5], जहाँ कम से कम 1171 ई. तक भीमसिंह तोमर के शासन करने के साक्ष्य उपलब्ध हैं।[6]

नागार्जुन के वापस भाग आने और उसके परिवार की स्त्रियों के पकड़े जाने के बीच तोमरों ने भी स्थिति भाँप कर उगते सूरज (पृथ्वीराज) को नमन करना ही ठीक समझा।

दिल्ली, अजमेर और गुड़पुर के मध्य बना ये घटनाक्रम पृथ्वीराज के पदासीन होने के कुछ ही समय बाद व मुख्य भारत में गोरी के पैर पड़ने से ठीक पहले घटित हुआ।

❍

उद्धरण :- 1. पृथ्वीराजविजय, खरतरगच्छ के जैन ग्रन्थ, हम्मीर महाकाव्य आदि, 2. पृथ्वीराजविजय सर्ग-9, श्लोक 68-88, 3. पृथ्वीराजविजय सर्ग-10, श्लोक 9, 4. वाडनगर प्रशस्ति 1151 ई., एपिग्राफिया इंडिका खंड-1, पृष्ठ 302, श्लोक 15, 5. पुरातन प्रबंध संग्रह, पृष्ठ ÷86, 6. खरतरगच्छ वृहद गुर्वावली, पृ. 23-24

विचार सरिता

(त्रिसप्तति लहरी)

– विचारक

जिसका कोई अस्तित्व नहीं, जिसका होना पाना तीन ही काल में सिद्ध नहीं होता, उसका कथन, प्रवचन ज्ञानीजन नहीं करते। जो स्वरूप से है ही नहीं मात्र प्रतीति है उसके बारे में कैसा चिन्तन और कैसा उपदेश। कथन करने योग्य तो एक ही वस्तु है और वह है ब्रह्मतत्व। जिसका काल करके अन्त नहीं, देश करके भी अन्त नहीं, जो सदा सर्वदा सर्वत्र एकरस होकर विद्यमान है उसी का चिन्तन और कथन मान्य है, ग्राह्य है। सुन्दरदास जी महाराज ने ठीक ही कहा है कि–

सुन्दर है सो है सदा, नहीं सो सुन्दर नाय।
सुन्दर है सो दीखै नहीं, दीखै सो सुन्दर नाय।।

अर्थात् जो सबसे सुन्दर परमात्मा है वह तो नित ही सुन्दर है उसका कभी अभाव नहीं होता तथा उसमें कोई विकार भी सम्भव नहीं और जो नाम–रूप से भासित जगत है वह कभी सुन्दर हो नहीं सकता। क्योंकि इसका कोई स्थायित्व नहीं है। आगे सुन्दरदास जी महाराज कहते हैं कि इसमें एक विचित्र बात यह है कि जो वास्तव में चेतन परमात्मा है सो तो दिखता नहीं और जो संसार दिख रहा है वह वास्तव में है नहीं।

इस बात को समझने के लिये हमें मरीचिका के दृष्टान्त को समझना होगा। मरुस्थल की वह भूमि जहाँ मध्या÷ में सूर्य की सीधी किरणों के परिणामस्वरूप वहाँ अथाह जल–राशि दिखती है। उस समय आप वहाँ जाकर देखेंगे तो पाएँगे कि वहाँ जो वास्तव में मरुभूमि है उसका अभाव है और जो जल वास्तव में है ही नहीं, उसकी प्रतीति हो रही है। ऐसे ही यह जो जगत प्रतीत हो रहा है वह ब्रह्म से ओत–प्रोत है। किन्तु जो वास्तव में सदैव मौजूद है वह दिख नहीं रहा है और जो नहीं है वह दिखाई पड़ रहा है।

ज्ञानीजनों की दृष्टि में परमात्मा के अतिरिक्त कुछ है ही नहीं, इसलिए वे कल्पित वस्तु के कथन व चिन्तन का निषेद्य करते हैं और जो सत् स्वरूप, चित्त स्वरूप और आनन्द स्वरूप परमात्मा ही सर्वत्र विद्यमान है, उसी का कथन व चिन्तन करते कभी थकते भी नहीं हैं। मानस में इसी संदर्भ में एक चौपाई आई है कि–

हरि अनन्त हरि कथा अनंता, कहरि सुनहु बहुंभांति जु सन्ता। अर्थात् हरि अनन्त है और उसका कथन भी अनंत है इसलिए सन्तजन विभिन्न प्रकार से उसका कथन करते व सुनते रहते हैं। जिसने हरि की कृपा पाली उसने सब कुछ पा लिया। उसके लिए पाने योग्य कुछ भी शेष नहीं रह जाता है।

जिसकी सभी वासनाएँ मिट गई जिसकी सभी वृत्तियाँ शान्त हो गई, जिसे अब कुछ भी पाने की चाह नहीं रही, ऐसा आत्मज्ञान को प्राप्त व्यक्ति ही शंका रहित एवं मुक्त मन वाला होता है। मन से मुक्त होने के कारण ही वह सब द्वन्द्वों के पार होकर केवल आत्मा में स्थिर रहता है। उसके सभी आग्रह समाप्त हो जाते हैं, उसका अहंकार गलित हो जाता है जिससे कर्तव्य का अभिमान नहीं रहता। शास्त्र विहित यम, नियमादि कर्म करने का ज्ञानी का कोई आग्रह नहीं रहता वे सब स्वभाववत् स्वत: होते रहते हैं। ऐसा ज्ञानी बिना किसी आग्रह के देखना, सुनना, स्पर्श करना, सूंघना, खाना आदि इन्द्रियों के सभी कार्य प्रारब्धाधीन करता हुआ भी कुछ नहीं करता है। कामना रहित वृत्ति होने के कारण वह सांसारिक धर्मों को करते हुए भी लिपायमान नहीं होता।

कर्तव्य, अकर्तव्य, आचार–अनाचार, राग–द्वेष सब अज्ञानजनित स्थित का परिचायक है। मन की उपस्थिति से ही यह भेद पैदा होता है। किन्तु आत्मज्ञानी सदैव स्वस्थचित्त एवं शुद्ध बुद्धि वाला होता है। उससे जो भी कर्म होंगे पूर्ण होश और विवेक से होंगे। उसमें स्वार्थ,

वासना एवं अहंकार आदि की गंध का अभाव हो जाता है जिससे वह सदैव शुद्ध, बुद्ध होकर जीता है। पवित्र और शुद्ध अन्त:करण वाला जिज्ञासु श्रवण का अधिकारी होता है। सुनने की कला जिस साधक को आ गई उसे जप, तप, योग, यज्ञ, ध्यान, समाधि, हठयोग, भक्ति आदि की कोई आवश्यकता नहीं। राजा जनक को सुनने मात्र से बोध हो गया, उन्होंने कोई जप-तप नहीं किया था।

आत्मबोध के लिए किसी भी प्रकार की विधि या निषेध की आवश्यकता नहीं। बस केवल अपने होने पने में स्थिति करनी है। अपने होने पने का किसी भी काल या देश में अभाव नहीं होता, अत: जो है उसकी स्मृति मात्र पर्याप्त है। अपने स्वभाव में जीने की कला का नाम जीवन है। जो अपने स्वभाव में नहीं है वह जीने की भ्रान्ति पाल रहा है। ऐसे पर में जीने वाले का जीवन तो मृत्यु का जीवन है। वह पल-पल मृत्यु की ओर अग्रसर हो रहा है।

बालक और ज्ञानी में थोड़ी समानता है कि दोनों स्वभाव में जीते हैं किन्तु बालक मन के स्वभाव में जीता है। वह अपनी सारी इच्छाएँ पूरी करना चाहता है। शुभ-अशुभ का भेद उसमें नहीं होता क्योंकि उसकी बुद्धि का विकास अभी हुआ नहीं। वह तो मन के धरातल पर जीता है। पूर्णिमा के चन्द्रमा को गेंद समझकर उसे पकड़ने के लिए मचल जाना उसके लिए स्वाभाविक है। किन्तु ज्ञानी मन के नहीं, आत्मा के स्वभाव में जीता है। वह मन और बुद्धि से पार हो चुका है अत: मन और बुधिजन्य क्रियाओं का असर ज्ञानी पर होता ही नहीं। इसलिए वह ज्ञानी पुरुष भी शुभ-अशुभ का भेद किये बिना आत्मा के स्वभाव के अनुकूल जो करने को आवश्यक होता है, वह बलवत् कर लेता है।

ऐसा ज्ञानी पुरुष शान्त स्वभाव से एकदम सरल होकर जीता है। सरल का अभिप्राय यहाँ यह है कि वह इतना सुहृदयी होता है कि न वह किसी से भय खाता है और न उससे ही कोई भयभीत होता है। वह छोटे शिशु की तरह सबका प्रिय और सबको प्रेम करने वाला होता है। उसकी दृष्टि में कोई न अपना है न पराया है। अद्वैत भाव से वह अपने स्वभाव में जीता हुआ निजानंद के आनंद में सदैव मग्न रहता है।

सदानंद! नित्यानंद!! आनन्दानन्द!!!

पृष्ठ 24 का शेष

महान क्रान्तिकारी राव गोपालसिंह खरवा

एवं कार्यकलापों के लिए प्रसिद्ध थे एवं कुछ काल के लिए मेवाड़ राज्य के दीवान भी रह चुके थे, कृष्णा मिल्स के कार्य संचालन हेतु कुछ समय तक ब्यावर शहर में रहे थे। ऐसे तपे हुए क्रान्तिकारी के सत्संग से राठीजी में देशभक्ति और उग्र राष्ट्रीयता का प्रादुर्भाव हुआ। उन्होंने अपने धन्धे और जन्मजात स्वभाव के अनुकूल क्रान्ति में सक्रिय भाग न लेकर द्रव्य द्वारा क्रान्तिकारियों को अमूल्य एवं आवश्यक सहायता प्रदान की थी। राजस्थान में उस काल में आहूत क्रान्ति-यज्ञ का उन्हें आर्थिक स्तम्भ कहें तो अत्युक्ति न होगी। प्रथम बार राठी जी के माध्यम से राव गोपालसिंह का श्यामजी कृष्ण वर्मा से परिचय हुआ। और श्यामजी कृष्ण ने राव गोपालसिंह के रूप में प्रथम बार एक वीर राजपूत के व्यक्तित्व का दर्शन किया। उस काल के प्रमुख क्रान्तिकारी योगीराज अरविन्द घोष बड़ोदा से श्यामजी कृष्ण वर्मा से मिलने ब्यावर आए तो श्यामजी वर्मा उन्हें राव गोपालसिंह से मिलाए बिना नहीं रह सके। अरविन्द घोष की राव गोपालसिंह से वह प्रथम मुलाकात थी। सन् 1906 ई.)।

साभार : **'राव गोपालसिंह खरवा' ले. सुरजनसिंह झाझड़**

❍

ईश्वर ने सब मनुष्यों को स्वतंत्र उत्पन्न किया है, परन्तु व्यक्तिगत स्वतंत्रता वहीं तक दी जा सकती है, जहाँ दूसरों की स्वतंत्रता में बाधा ना पड़े। यही राष्ट्रीय नियमों का मूल है। **– जयशंकर प्रसाद**

महर्षि पतञ्जलि योग सूत्र

– डॉ. मन्जु सिंह

भारत के षट् दर्शनों में महर्षि पतञ्जलि का योग दर्शन महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। महर्षि पतञ्जलि ने अपने योग सूत्र में चित्त की वृत्तियों के निरोध को योग बताया है। चित्त की वृत्तियों के निरोध के लिए अभ्यास व वैराग्य आवश्यक बताया गया है। इस अवस्था की प्राप्ति के लिए जो साधन बताये गये उसे ही अष्टांग योग कहा गया है।

योगाङ्गानुष्ठानादशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिराविवेक ख्यातेः।

योग के आठ अंगों के निरन्तर अभ्यास से अशुद्धता नष्ट हो जाती है और ज्ञान तथा विवेक का उदय होता है। यदि संसार के लोग इस बात को लेकर गंभीर हैं कि शान्ति स्थापित होनी चाहिए तो इसका एकमात्र साधन है–'अष्टांग योग का पालन'।

यमनियमासन प्राणायाम प्रत्याहार,
धारणा ध्यान समाधयोऽष्टावङ्गानि।

यम, नियम, आसन, प्रणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा और चेतना की उच्च अवस्था समाधि, ये योग के आठ अंग हैं।

योग के आठ अंगों में हर एक अंग पूर्णता से जुड़ा है। अंग एक साथ विकसित होते हैं। ऐसा नहीं है कि नाक पहले और कान बाद में विवकसित होता है। इसलिए पतञ्जलि कहते हैं कि ये सभी योग के अंग हैं।

अष्टांग योग के अन्तर्गत प्रथम पाँच अंग 'बहिरंग' और शेष तीन अंग 'अंतरंग' नाम से प्रसिद्ध हैं।

बहिरंग–यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार।

अंरतंग–धारणा, ध्यान, समाधि।

1. यम– चित्त को धर्म में स्थिर रखने का साधन, अर्थात् वह अनुष्ठान है जिससे साधक बहिर्मुखता से अन्तर्मुखता की ओर बढता है। यम पाँच हैं।

(क) अहिंसा–तीन स्तर पर अहिंसा का अभ्यास होना चाहिए– क्रिया, भाषण और मानसिक स्तर।

अहिंसाप्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैर त्यागः।

जो अहिंसा में स्थापित होता है, उसकी उपस्थिति में हिंसा नहीं होती है।

(ख) सत्य–जो गैर परिवर्तनशील है, वास्तविक है।

सत्य प्रतिष्ठायां क्रियाफलाश्रयत्वम्।

सत्य में प्रतिष्ठित होने से सभी कार्य फलदायक होते हैं।

(ग) अस्तेय–वस्तुओं और दूसरों के गुणों की चोरी करने की इच्छा न होना।

अस्तेयप्रतिष्ठायां सर्वरत्नोपस्थानम्।

अस्तेय में स्थापित होने से धन–यश और गुण योगी के पास आते हैं।

(घ) ब्रह्मचर्य–ब्रह्म में आचरण करना ब्रह्मचर्य है।

ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां वीर्य लाभः।

ब्रह्मचर्य में जो स्थित है वह बहादुरी और ताकत प्राप्त करता है।

(ड) अपरिग्रह–सांसारिक सामग्री और भावनात्मक वस्तुओं, दोनों के गैर संचय के अभ्यास को अपरिग्रह कहा जाता है।

अपरिग्रहस्थैर्ये जन्मकथन्ता सम्बोधः।

गैर संचय में स्थापित होने से अतीत और भविष्य के जन्मों का ज्ञान होता है।

2. नियम– समाज द्वारा स्वीकृति नियमों के अनुसार आचरण नियम है। नियमों पर चलने वाला व्यक्ति आदर्श पुरुष है। नियम भी पाँच बताए गए हैं।

(क) शौच–शारीरिक व मानसिक स्वच्छता ही शौच है।

शौचात्स्वाङ्गजुगुप्सा परैरसंसर्गः।

स्वच्छता का अभ्यास करने से व्यक्ति स्वयं के शरीर और दूसरों के शरीर के प्रति आकर्षण से वैराग्य भाव प्राप्त कर लेता है।

(ख) संतोष–जो है और जो नहीं है, दोनों स्थितियों में तृप्ति रखना।

संतोषादनुत्तमसुख लाभ।

संतोष के अभ्यास से अनन्त आनन्द की प्राप्ति होती है।

(ग) तप–तप स्वेच्छा से विरोधात्मक स्थितियों से गुजरना है, जैसे–गर्मी और सर्दी।

कायेन्द्रियसिद्धिरशुद्धिक्षयात्तपसः।

तप के अभ्यास से अशुद्धि का नाश हो जाता है, इन्द्रियों की शुद्धि हो जाती है अत: हर प्रकार के वातावरण में राग–द्वेष रहित रह सकते हैं।

(घ) स्वाध्याय–स्वयं के स्वभाव को समझने का अभ्यास करना।

स्वाध्यायादिष्ट देवता सम्प्रयोगः।

स्वाध्याय के अभ्यास से अभ्यासी को सूक्ष्म जगत का ज्ञान होता है।

(ड) ईश्वर–प्रणिधान–ईश्वर तत्त्व के प्रति पूर्ण समर्पण।

समाधिसिद्धिरीश्वर प्रणिधानात्।

ईश्वर तत्त्व के प्रति समर्पण करने से समाधि में पूर्णता प्राप्त होती है।

3. आसन –

स्थिरसुखमासनम्।

जो स्थिर है और जो सहज है वह आसन है।

ततोद्वन्द्वानभिघातः।

आसन के अभ्यास से सभी द्वन्द्वों का विघटन होता है।

4. प्राणायाम –

तस्मिन् सतिश्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः

सांस के प्राकृतिक प्रवाह को बाधित करना प्राणायाम है। आसन की स्थिति में अन्दर या बाहर जाने वाली सांस की गति को तोड़ना प्राणायाम है।

5. प्रत्याहार –

स्वविषयासम्प्रयोगे चित्तस्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः।

इन्द्रियों द्वारा बाहरी दुनिया में फंसे रहना मन का स्वभाव है। प्रत्याहार मन को अन्तर्मुखी करने की प्रक्रिया है। प्रत्याहार मन को अन्तर्मुखी करने का एक विकल्प है। प्रत्याहार से इन्द्रियों पर विजय की जा सकती है।

6. धारणा–पतञ्जलि के अनुसार बाहर अथवा शरीर के भीतर कहीं भी, किसी एक देह में चित्त को ठहराना ही धारणा है। यह समाधि की ओर पहला कदम है।

देशबन्धश्चित्तस्य धारणा।

धारणा एकाग्रता है। इसमें किसी विशेष वस्तु या स्थान पर मन को बाँधना है।

7. ध्यान– तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्।

जहाँ चित्त को लगाया गया उसी में वृत्ति का एकतार चलना, क्रम न टूटना ध्यान कहलाता है। धारणा स्थिर हो जाती है तो प्रयास विलीन हो जाता है और मन स्थिर हो जाता है। यही ध्यान है।

8. समाधि–समाधि पतञ्जलि का अन्तिम लक्ष्य है।

तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः।

जब केवल ध्येय मात्र की प्रतीति रह जाए और चित्त का निज स्वरूप शून्यता हो जाए तब वही ध्यान समाधि में परिवर्तित हो जाता है। जब ध्यान में सहजता आने लगती है तो स्वयं और ध्यान की वस्तु के बीच का अन्तर समाप्त हो जाता है। यह अवस्था समाधि है। मन की एक अविभाज्य समता की स्थिति है। योगी अपने ध्यान द्वारा उच्चतम शिखर पर पहुँचता है और समाधि की अवस्था में प्रवेश करता है।

अंगों पर नियंत्रण, मन पर नियंत्रण रखने से होता है। अंगों की जो उचित क्रिया है उसे होने दो, पर नियंत्रण रखो।

– महर्षि पतञ्जलि

अपनी बात

क्रोध हमारे जीवन का एक विकार है। इस बात को जानते हैं कि क्रोध करना बुरा है। पर फिर भी न्यूनाधिक सही, सभी के व्यवहार में क्रोध की झलक नजर आ ही जाती है। क्रोध के विरुद्ध उपदेशक भी लगभग सभी होते हैं। दूसरे को समझाने का प्रयास करते हैं-क्रोध मत करो, क्रोध बुरी बात है। क्रोध करोगे तो नरक में जाओगे। क्रोध करोगे तो सम्मान खो जाएगा। क्रोध करोगे तो लोग प्रतिष्ठा नहीं देंगे। अत: क्रोध कभी मत करो। मगर जिसका स्वभाव क्रोधी है, जिसमें क्रोध उठता है, वह क्या करे? क्रोध को दबाए, पीये, अपने भीतर सरकाये तो क्रोध उसके खून में छा जाएगा। क्रोध उसकी रग-रग में भर जाएगा। पहले तो कभी-कभी क्रोध होता था, पर दबाया तो वह लगातार क्रोधी बना रहेगा। क्रोध उसकी नियति बन जायेगी। ऊपर से मुस्करायेगा, वह मुस्कराहट झूठी होगी। यही उसकी जिन्दगी बर्बाद करने का कारण बन जायेगी। ऊपर मुस्कराता रहेगा, भीतर जलता रहेगा। न मुस्कराहट सच्ची हो पायेगी, न जलन को निकालने का कोई मौका मिल पायेगा।

क्रोध अगर है तो क्रोध को जानना चाहिए, पहचानना चाहिए। क्रोध हमारे भीतर है, यह तथ्य है। इस तथ्य को जाने, इस पर ध्यान करे, इसको पहचाने। क्रोध गलत है यह हम सब जानते हैं पर यह जानकर बैठे रहें, यह पर्याप्त नहीं है। क्रोध का निरीक्षण करें, निष्पक्ष निरीक्षण करें। तब हम देखेंगे कि क्रोध को देखते-देखते क्रोध वाष्पीभूत हो जायेगा। क्योंकि जैसे ही देखने वाला, साक्षी जगता है, जैसे ही हमारे अन्दर देखने वाली क्षमता जग जाती है, वैसे ही क्रोध के बचने का कोई उपाय नहीं रह जाता क्योंकि क्रोध के रहने की जो अनिवार्य शर्त है, वही टूट गई। वह अनिवार्य शर्त है, व्यक्ति भूल ही जाये कि वह है। जब क्रोध आता है तो व्यक्ति आपे में नहीं रहता। क्रोध का धुआं, क्रोध का नशा, बस क्रोध ही क्रोध रहता है और हमारा आपा उसी धुएं में खो जाता है। तब क्रोध ही बचता है। यदि हम धुएं से बाहर दूर, निर्विचार खड़े देखते रहें कि यह धुआं चारों तरफ उठ रहा है, यह क्रोध मुझे घेर रहा है। मैं इसे देखूं, मैं इसे पहचानूं, यह मेरा ही अंग है, यह मेरी ही ऊर्जा है। मैं इससे अपरिचित न रह जाऊँ, मैं इसका आत्मज्ञान करूँ। ऐसे भाव से यदि हम क्रोध को देखें तो चकित हो जाएँगे, साक्षी भाव के समक्ष क्रोध काफूर हो जाएगा। अत: क्रोध को दबाना नहीं है, पहचानना है। कई बार बताया जाता है कि जब क्रोध आए तो मुँह में पानी भर लो, उस जगह से, उस प्रसंग से दूर चले जाओ। ये उपाय कुछ समय के लिए उस क्रोध को रोक सकते हैं, पर यह उसकी पहचान नहीं है। अन्दर देखें और स्वीकार करें कि क्रोध है। क्रोध को ऐसे देखेंगे तो फिर क्रोध नहीं बच पायेगा।

क्रोध ही नहीं, सभी विकारों पर यही विधि अपनाकर हम उनसे छुटकारा पा सकते हैं। संघ में प्रत्येक खेल के बाद उस पर चर्चा होती है उसमें यही देखते हैं कि क्या हमने नियम तोड़े, क्या मैंने अनुशासन भंग किया? स्व निरीक्षण हेतु ही डायरी लेखन के निर्देश होते हैं। डायरी में हमने अपने अन्दर झांककर जो देखा वह लिखना है। इस प्रकार झांकना ही साक्षी बनना है। ऐसे साक्षी भाव से ही स्वच्छता पनपती है, हम निर्मल बनते हैं। हमारे परमात्मा अंश पर चढी कालिमा दूर होती है।

शिविर सूचना

यह सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष है कि श्री क्षत्रिय युवक संघ के आगामी प्रशिक्षण शिविर निम्न प्रकार से होने जा रहे हैं -

क्र.सं.	शिविर	समय	स्थान	मार्ग आदि
01	प्रा.प्र.शि.	23.9.2022 से 26.9.2022	बामणिया (चूरू)	सुजानगढ़, सालासर से बसें हैं।
02	प्रा.प्र.शि.	23.9.2022 से 26.9.2022	मेड़ता रोड़ (नागौर)	नागौर-अजमेर मार्ग पर।
03	प्रा.प्र.शि.	23.9.2022 से 26.9.2022	कोटासर (बीकानेर)	लखासर, सेरुणा से टैक्सी बस उपलब्ध।
04	प्रा.प्र.शि.	23.9.2022 से 26.9.2022	लंबोर बड़ी (चूरू)	राजगढ से देरासर मार्ग पर।
05	प्रा.प्र.शि.	23.9.2022 से 26.9.2022	धनेश्वर महादेव (चित्तौड़गढ़)	चित्तौड़गढ़ से भदेसर रोड़ पर अमरपुरा उतरें। सम्पर्क- जीवनसिंह नरधारी-9413978303
06	प्रा.प्र.शि.	23.9.2022 से 26.9.2022	बाखासर (बाड़मेर)	बाखासर से रड़वा रोड़ पर तरवर डेर सरकारी विद्यालय।
07	प्रा.प्र.शि.	23.9.2022 से 26.9.2022	बिजावल (बाड़मेर)	गडरा रोड़ से बिजावल सड़क मार्ग पर।
08	प्रा.प्र.शि.	23.9.2022 से 26.9.2022	डांगरी (जैसलमेर)	पोकरण-बाड़मेर मार्ग पर।
09	प्रा.प्र.शि.	23.9.2022 से 26.9.2022	दिवेर (राजसमन्द)	विजय स्मारक दिवेर। नाथद्वारा-ब्यावर के बीच नेशनल हाई-वे पर स्थित।
10	प्रा.प्र.शि.	23.9.2022 से 26.9.2022	खोहर (अलवर)	नीमराणा।
11	प्रा.प्र.शि.	23.9.2022 से 26.9.2022	बून्दी	महाराजा महिपतसिंह जी की बगीची, चौथ माता मंदिर रोड़, तालाब के पास, बून्दी।
12	प्रा.प्र.शि.	23.9.2022 से 26.9.2022	गिरराजसर (बीकानेर)	
13	प्रा.प्र.शि.	23.9.2022 से 26.9.2022	रामासनी (जोधपुर)	तह. भोपालगढ़।
14	प्रा.प्र.शि.	23.9.2022 से 26.9.2022	टौंक-जिला	
15	प्रा.प्र.शि.	23.9.2022 से 26.09.2022	देवलियां (जोधपुर)	
16	प्रा.प्र.शि.	24.9.2022 से 26.9.2022	जगनाथपुरा (गुजरात)	जिला-मेहसाणा।

क्र.सं.	शिविर	समय	स्थान	मार्ग आदि
17	प्रा.प्र.शि.	24.9.2022 से 27.9.2022	सिढां राम चीला नाडा (जोधपुर)	तह. बाप।
18	प्रा.प्र.शि.	24.9.2022 से 27.9.2022	सिवाना (बाड़मेर)	बेरा सुन्दरिया। बालोतरा, जालोर जोधपुर से सिवाना के लिए बस है।
19	प्रा.प्र.शि.	24.9.2022 से 27.9.2022	कोलू (बाड़मेर)	अमरसिंह की ढाणी के पास बस स्टैण्ड मोराला कोलू। बायतु, बालोतरा, गिडा व बाड़मेर से बस।
20	प्रा.प्र.शि.	27.9.2022 से 30.9.2022	हमीरा (जैसलमेर)	जैसलमेर से मोहनगढ़ वाया थईयात।
21	मा.प्र.शि.	1.10.2022 से 7.10.2022	गडरा रोड़ (बाड़मेर)	ऑक्सफोर्ड पब्लिक स्कूल, गडरा रोड़।
22	प्रा.प्र.शि.	2.10.2022 से 5.10.2022	धोलेरा (बीकानेर)	
23	प्रा.प्र.शि.	2.10.2022 से 5.10.2022	दामोदरा (जैसलमेर)	जैसलमेर से बस, रामगढ से वाया कनोई।
24	प्रा.प्र.शि.	2.10.2022 से 5.10.2022	भटवाड़ा खुर्द (चित्तौड़गढ़)	चित्तौड़गढ़ से बस व ऑटो। सम्पर्क- भगवतसिंह-9001852611 विक्रमसिंह झालरा-8527222532

बालिका शिविर

क्र.सं.	शिविर	समय	स्थान	मार्ग आदि
25	प्रा.प्र.शि.	23.9.2022 से 26.9.2022	नाथद्वारा (राजसमन्द)	महाराणा प्रताप बोर्डिंग हाउस।
26	प्रा.प्र.शि.	23.9.2022 से 26.9.2022	बाड़मेर	आलोक आश्रम।
27	प्रा.प्र.शि.	24.9.2022 से 26.9.2022	कामली (गुजरात)	तह. ऊँझा, जिला-मेहसाणा।
28	प्रा.प्र.शि.	1.10.2022 से 3.10.2022	पिलूड़ा (गुजरात)	तह. थराद।
29	प्रा.प्र.शि.	1.10.2022 से 4.10.2022	पोकरण (जैसलमेर)	पोकरण शहर में।
30	प्रा.प्र.शि.	2.10.2022 से 5.10.2022	निम्बाहेड़ा (चित्तौड़गढ़	विद्या निकेतन स्कूल, मॉडल स्कूल के पास, बड़ोली रोड़, निम्बाहेड़ा।

दीपसिंह बेण्याकाबास

शिविर कार्यालय प्रमुख, श्री क्षत्रिय युवक संघ

नवरात्रि के पावन पर्व पर सभी
स्नेहिल बंधुओं को हार्दिक शुभकामनाएं।।

IAS / RAS

तैयारी करने का राजस्थान का सर्वश्रेष्ठ संस्थान

स्प्रिंग बोर्ड

Spring Board

Springboard Academy,
Main Riddi Siddi Choraha,
Opposite Bank of Baroda,
Gopalpura, Bypass Jaipur

Website : www.springboardindia.org

श्री जय अंबे स्वयं सेवक संघ

श्री जय अंबे स्वयं सेवक संघ
स्थापना :- २१/०४/१९९०

-: श्री जय अंबे स्वयं सेवक संघ के कार्य :-

+ साइकल स्कीम + 700 सभ्य की बचत स्कीम + व्यसन मुक्ति
+ कुरिवाज का त्याग + अंध श्रद्धा को दूर करना + प्राथमिक कक्षा के बालकों के लिए हर साल फ्री में नोटबुक और जरूरी सामग्री देना
+ इनाम वितरण + दशहरा महोत्सव + महाराणा प्रताप जयंती महोत्सव
+ गांव की प्राथमिक स्कूल में कंप्यूटर लेब निशुल्क बालकों के लिए

देवेंद्रसिंह, घनश्यामसिंह
अध्यक्ष

सिद्धराजसिंह, अनिरुद्धसिंह
उपाध्यक्ष

हशपालसिंह, जयदीपसिंह
उपाध्यक्ष

यशराजसिंह, तजवितसिंह
मंत्री

हिरेन्द्रसिंह जटुभा
संगठन मंत्री

मित्राजसिंह, नवलसिंह
संगठन मंत्री

महावीरसिंह, महेंद्रसिंह
छात्र पुरस्कार वितरण - समन्वयक

भगीरथसिंह, किशोरसिंह
छात्र पुरस्कार वितरण - समन्वयक

रामदेवसिंह नारुभा
महाराणा प्रताप वर्षगांठ - समन्वयक

शक्तिसिंह, राजेन्द्रसिंह
महाराणा प्रताप जयंती - सह संयोजक

सिद्धराजसिंह, जयेंद्र सिंह
दशहरा महोत्सव समन्वयक

युवराजसिंह, महेंद्रसिंह
दशहरा पर्व - सह संयोजक

सितम्बर, सन् 2022
वर्ष : 59, अंक : 09

समाचार पत्र पंजी.संख्या R.N.7127/60
डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City /411/2020-22

संघशक्ति

ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा,
जयपुर-302012
दूरभाष : 0141-2466353

E-mail : sanghshakti@gmail.com
Website : www.shrikys.org

श्रीमान् ....

....

....

स्वत्वाधिकारी श्री संघशक्ति प्रकाशन प्रन्यास के लिये, मुद्रक व प्रकाशक, लक्ष्मणसिंह द्वारा ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर से : गजेन्द्र प्रिन्टर्स, जैन मन्दिर सांगाकान, सांगों का रास्ता, किशनपोल बाजार, जयपुर फोन : 2313462 में मुद्रित। सम्पादक-लक्ष्मणसिंह